नागरिकता संशोधन कानून:

ऐतिहासिक कदम और निर्मूल शंकाएं

संपादन: शिवानंद द्विवेदी

Dr. Syama Prasad Mookerjee
Research Foundation

डॉ.श्यामा प्रसाद मुखर्जी
रिसर्च फाउंडेशन

संपादन

शिवानंद द्विवेदी

सीनियर रिसर्च फेलो
डॉ.श्यामा प्रसाद मुखर्जी रिसर्च फाउंडेशन

रिसर्च टीम

आदर्श तिवारी

रिसर्च एसोसिएट
डॉ.श्यामा प्रसाद मुखर्जी रिसर्च फाउंडेशन

अभय सिंह

रिसर्च एसोसिएट
डॉ.श्यामा प्रसाद मुखर्जी रिसर्च फाउंडेशन

डिजाइन

अजित कुमार सिंह

Dr. Syama Prasad Mookerjee
Research Foundation

Dr. Syama Prasad Mookerjee
Research Foundation

9, Ashoka Road, New Delhi- 110001

Web :- www.spmrf.org, E-Mail: office@spmrf.org,

@spmrfoundation

Phone:011-23005850

विषय सूची

भूमिका

1.	नागरिकता कानून एवं उसकी विकास यात्रा - **डॉ० ए. के. वर्मा**	**5**
2.	नागरिकता संशोधन क़ानून पर बवाल क्यों? - **बलबीर पुंज**	**11**
3.	पाकिस्तान और बांग्लादेश में अल्पसंख्यकों पर अत्याचार - **ज्ञानेन्द्र नाथ बरतरिया**	**14**
4.	नागरिकता कानून और कांग्रेस का बेजा विरोध - **रमेश कुमार दुबे**	**20**
5.	नया इतिहास रचती मोदी और शाह की जोड़ी - **प्रदीप सिंह**	**22**
6.	वैचारिक योद्धा अमित शाह - **हर्ष वर्धन त्रिपाठी**	**24**
7.	नागरिकता कानून: राजनीतिक इतिहास का महत्वपूर्ण बिंदु - **अभिनव प्रकाश**	**26**
8.	नागरिकता कानून : खुलने लगी झूठ की परतें -**शिवानंद द्विवेदी**	**28**
9.	नागरिकता संशोधन कानून: संवैधानिकता की कसौटी पर खरा - **आयुष आनंद**	**32**
10.	आंदोलन के नाम पर चल रहा राजनीतिक षड्यंत्र - **आशीष कुमार 'अंशु'**	**38**
11.	वैचारिक प्रतिबद्धताओं को अमल में लाती मोदी सरकार -**आदर्श तिवारी**	**45**

भूमिका

संसद के बीते सत्र में पारित होने के बाद नागरिकता संशोधन कानून-2019 को लेकर देशव्यापी बहस चल पड़ी है. इस कानून को लेकर सहमति-असहमति से जुड़े अनेक प्रश्न खड़े हुए हैं. किसी मसले पर बहस और असहमति को खारिज नहीं किया जा सकता, किंतु नागरिकता कानून को लेकर जिस तरह से भ्रामक अप-प्रचार किया गया, उसने देश की शांति व्यवस्था के लिए अस्थिरता का वातावरण पैदा कर दिया. असहमति के प्रश्नों पर गंभीर चर्चा की परवाह किये बिना राजनीतिक दलों ने इसे उत्पात और उपद्रव की शक्ल में तब्दील करने में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ी.

चूंकि संसद के दोनों सदनों में जब यह कानून विधेयक के रूप में रखा गया, तब इसपर सभी दलों के प्रतिनिधि सांसदों ने बहस में हिस्सा लिया. उनकी असहमतियों के बिंदुओं पर भी चर्चा सामने आई. हरेक दल द्वारा उठाये गये प्रश्नों पर गृहमंत्री अमित शाह ने चर्चा में जवाब भी दिया. इसके बाद विधेयक सदन में पारित हुआ.

पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफगानिस्तान में धार्मिक रूप से प्रताड़ित वहां के अल्पसंख्यक- हिन्दू, सिख, जैन, बौद्ध, पारसी और ईसाई, जो 31 दिसंबर 2014 तक भारत में शरण ले चुके हैं, उनको भारत की नागरिकता देने के लिए यह कानून सरकार लेकर आई. यह एक ऐसी बहुप्रतीक्षित मांग थी, जिसको लेकर आजादी के बाद कांग्रेस सहित अनेक दलों ने कभी न कभी आवाज उठाई है. किंतु जब मोदी सरकार ने इस बहुप्रतीक्षित मांग को पूरा किया तब वही दल इसका बेजा विरोध करने पर उतारू हो गये और ऐसे भ्रामक अप-प्रचारों को हवा देने लगे कि यह कानून भारत के मुसलमानो के खिलाफ है. जबकि सच्चाई यह है कि यह कानून भारत के किसी भी नागरिक की नागरिकता पर कोई असर डालने वाला नहीं है. कुछ राजनीतिक दलों के दुष्प्रचारों एवं राजनीतिक हथकंडों का कु-प्रभाव यह हुआ कि देश में कई स्थानों पर हिंसक प्रदर्शन हुए और आगजनी तथा सरकारी संपति को नुकसान पहुंचाने की घटनाएँ देखने को मिलीं.

नागरिकता कानून पर चल रही इस बहस के बीच देश के अनेक लेखकों, पत्रकारों, स्तंभकारों तथा प्रबुद्ध समाज के लोगों ने अलग-अलग मंचों से इस कानून पर फैलाए जा रहे झूठ के बवंडर से पर्दा हटाने का प्रयास किया है. इस पुस्तिका में नागरिकता कानून के विविध पक्षों पर प्रख्यात लेखकों तथा शोधार्थियों के दस लेखों का संकलन किया गया है. डॉ श्यामा प्रसाद मुखर्जी रिसर्च फाउंडेशन उन सभी लेखकों के प्रति आभार व्यक्त करता है कि उन्होंने इस संकलन में अपना लेखकीय सहयोग दिया है. हमें भरोसा है कि इस पुस्तिका में संकलित लेख नागरिकता कानून के सभी पक्षों को रखते हुए उस झूठ से आवरण हटायेंगे, जो पिछले कुछ दिनों में इस कानून के खिलाफ गढ़ा गया है.

शिवानंद द्विवेदी
सीनियर रिसर्च फेलो
डॉ श्यामा प्रसाद मुखर्जी रिसर्च फाउंडेशन

नागरिकता कानून एवं उसकी विकास यात्रा

डॉ० ए. के. वर्मा

भारतीय नागरिकता कानून 1955 में दिसम्बर 2019 में संशोधन किया गया जिसको लेकर देश में हिंसात्मक विरोध और प्रदर्शन हुए. नागरिकता कानून में यह नवां संशोधन है. इसके पूर्व इसमें आठ बार - 1957, 1960, 1985, 1986, 1992, 2003, 2005 और 2015 में संशोधन हो चुके हैं. नागरिकता सम्बन्धी संवैधानिक और विधिक प्रावधान क्या हैं?

संवैधानिक स्थिति

भारतीय संविधान संघात्मक संविधान है जिसमें मूलतः दो सरकारें – संघीय (केंद्र) सरकार और प्रांतीय (राज्य) सरकारें रही हैं. वर्ष 1992 में संविधान के 73वें और 74वें संशोधनों के माध्यम से इसमें स्थानीय (पंचायत और नगरपालिका) सरकारें भी जुड़ गई और संघीय व्यवस्था त्रि-स्तरीय हो गई है, लेकिन संविधान केवल भारतीय नागरिकता को मान्यता देता है.

नागरिकता के सम्बन्ध में संविधान दो व्यवस्थाएं बनाता है. एक, संविधान लागू होने के समय कौन नागरिक माना जायेगा? दो, संविधान लागू होने के बाद कौन नागरिक हो सकेगा?

संविधान लागू होने के समय कौन भारत का नागरिक होगा, यह संविधान स्वयं बताता है, लेकिन- संविधान लागू होने के बाद कौन नागरिक होगा, संविधान इसके निर्धारण का दायित्व संसद को देता है.

संसद ने संविधान के अनु०-11 से प्राप्त अधिकारों का प्रयोग कर 'नागरिकता अधिनियम 1955' बनाया जिसमें उन तरीकों का ज़िक्र है जिनसे कोई व्यक्ति भारत की नागरिकता प्राप्त कर सकता है.

संवैधानिक प्रावधान क्या हैं ?

संविधान लागू होने के समय कौन-कौन भारत का नागरिक होगा, इस पर संविधान चार प्रकार की परिस्थितियों की कल्पना करता है.

एक, जो व्यक्ति संविधान लागू होने के समय भारत में वास करता हो और -

a. भारत में जन्मा हो, या
b. जिसके पिता या माता भारत में जन्मे हों, या
c. जो सामान्यतः 5 वर्ष की अवधि से भारतीय भू-भाग में निवास कर रहा हो वह भारत का नागरिक होगा.

दो, संविधान लागू होने के समय जो व्यक्ति पाकिस्तान से विस्थापित हो आया हो -

d. 19 जुलाई 1948 के पूर्व जो व्यक्ति पाकिस्तान से भारत आया हो (इस तिथि से परमिट व्यवस्था लागू हुई थी), और
    i. जो स्वयं या जिसके माता-पिता, दादा-दादी या नाना-नानी भारत सरकार अधिनियम 1935 के अंतर्गत परिभाषित भारतीय भू-भाग में जन्में हों, तथा

संविधान लागू होने के समय कौन भारत का नागरिक होगा, यह संविधान स्वयं बताता है, लेकिन- संविधान लागू होने के बाद कौन नागरिक होगा, संविधान इसके निर्धारण का दायित्व संसद को देता है.

ii. जो भारतीय भू-भाग में सामान्यतः रहता हो वह भारत का नागरिक होगा

e. यदि वह 19 जुलाई 1948 के बाद पाकिस्तान से भारत आया हो (इस तिथि से परमिट व्यवस्था लागू हुई थी) तो उसे भारत का नागरिक माना जायेगा यदि–

i. भारत में सक्षम अधिकारी के समक्ष रजिस्टर्ड हो, और

ii. आवेदन की तिथि से पूर्व 6 माह से भारत में निवास कर रहा हो.

तीन, संविधान लागू होने के समय जो व्यक्ति पाकिस्तान जाकर पुनः लौट आया हो-

जो व्यक्ति 1 मार्च 1947 के बाद पाकिस्तान चला गया हो, लेकिन बाद में स्थायी वापसी या पुनर्वास का परमिट प्राप्त कर भारत लौट आया हो उसे भी 19 जुलाई 1948 के बाद भारत लौट कर आने वाला नागरिक माना जायेगा.

चार, संविधान लागू होने के समय विदेश में रहने वाले व्यक्ति -

यदि कोई व्यक्ति, उसके माता-पिता, दादा-दादी या नाना-नानी भारत में जन्में हों, लेकिन संविधान लागू होने के समय वह विदेश में रह रहे हों, तो उसे भी भारत का नागरिक माना जायेगा, यदि वह भारतीय दूतावास या कॉन्सुलर ऑफिस में निर्धारित फॉर्म और प्रक्रिया द्वारा रजिस्टर करवा लेता है.

नागरिकता कानून 1955

संविधान लागू होने के बाद नागरिकता देने और समाप्त करने के सम्बन्ध में कानून बनाने का अधिकार भारतीय संसद को अनु०-11 के अंतर्गत प्राप्त है. इसका प्रयोग कर संसद ने 1955 में नागरिकता कानून बनाया जिसमें दिसम्बर 2019 तक कुल 9 बार संशोधन किये जा चुके हैं.

नागरिकता कानून के प्रावधान

नागरिकता कानून 1955 पांच प्रकार - जन्म से, वंशानुगत, पंजीकरण, देशीकरण और भारत द्वारा किसी क्षेत्र के अधिग्रहण – से भारत की नागरिकता प्रदान करने का विधान करता है.

1. जन्म से –

- जो भी व्यक्ति संविधान लागू होने अर्थात 26 जनवरी 1950 के बाद पर 1 जुलाई 1987 के पूर्व भारत में जन्मा हो वह भारत का नागरिक होगा.
- यदि वह 1 जुलाई 1987 या उसके बाद लेकिन नागरिकता संशोधन अधिनियम 2003 के लागू होने की तिथि अर्थात 3 दिसम्बर 2004 से पहले जन्मा हो तो वह भारत का नागरिक होगा पर उसके जन्म के समय उसके पिता या माता में कोई एक भारतीय नागरिक अवश्य होना चाहिए.
- यदि वह 3 दिसम्बर 2004 या उसके बाद जन्मा हो तो उसे भारत का नागरिक तभी माना जायेगा जब उसके जन्म के समय उसके माता व पिता दोनों भारतीय नागरिक हों, या दोनों में से एक भारतीय नागरिक हो और दूसरा अवैध रूप से भारत में न रह रहा हो.

2. वंशानुगत – इसके अंतर्गत विदेश में जन्में व्यक्ति को नागरिकता देने का प्रावधान है.

- जो भी व्यक्ति संविधान लागू होने अर्थात 26 जनवरी

1950 या उसके बाद लेकिन 10 दिसम्बर 1992 के पूर्व विदेश में जन्मा हो वह वंशानुगत आधार पर भारत का नागरिक होगा यदि उसका पिता भारतीय नागरिक होगा.

i. यदि उसका पिता भी वंशानुगत आधार पर भारतीय नागरिक है, तो उसे दो में से एक शर्त पूरी करनी होगी – (अ) उस व्यक्ति के लिए विदेश में भारतीय दूतावास या वाणिज्यिक कार्यालय में जन्म के एक वर्ष के अन्दर पंजीकृत होना आवश्यक होगा (जब तक कि भारत सरकार उसे इस प्रावधान से छूट न दे दे), या (ब) उसका पिता भारत सरकार के अधीन सेवा में रहा हो.

- यदि वह 10 दिसम्बर 1992 या उसके बाद विदेश में जन्मा हो तब उसके माता या पिता में से किसी एक को भारत का नागरिक होना ज़रूरी है.

i. यदि उसके पिता या माता में कोई एक भी वंशानुगत आधार पर भारतीय नागरिक है, तो उसे दो में से एक शर्त पूरी करनी होगी – (अ) उस व्यक्ति के लिए विदेश में भारतीय दूतावास या वाणिज्यिक कार्यालय में जन्म के एक वर्ष के अन्दर पंजीकृत होना आवश्यक होगा (जब तक कि भारत सरकार उसे इस प्रावधान से छूट न दे दे), या (ब) उसके पिता या माता में से कोई एक भारत सरकार के अधीन सेवा में रहा हो.

- यदि नागरिकता संशोधन अधिनियम 2003 के लागू होने की तिथि (3 दिसम्बर 2004) के बाद उसका जन्म विदेश में हुआ तो वह इस प्रावधान के अंतर्गत तब तक नागरिकता नहीं प्राप्त कर सकता जब तक

i. (अ) वह व्यक्ति भारतीय वाणिज्यिक दूतावस में जन्म के एक वर्ष के अन्दर निर्धारित फॉर्म और प्रक्रिया के द्वारा पंजीकृत नहीं हो जाता (जब तक कि भारत सरकार उसे इस प्रावधान से छूट न दे दे).

ii. यह पंजीकरण तब तक नहीं होगा जब तक कि उसके अभिभावक निर्धारित फॉर्म और विधि से यह घोषणा न करें कि नाबालिग किसी अन्य देश का पासपोर्ट नहीं धारण करता.

iii. नाबालिग के वयस्क होने के 6 माह के अन्दर उसे अपनी विदेशी नागरिकता, यदि कोई हो, त्यागना पड़ेगा अन्यथा उसकी भारतीय नागरिकता समाप्त हो जाएगी.

- कोई भी व्यक्ति जो विदेश में जन्मा हो, और जो संविधान लागू होने के समय अविभाजित भारत का नागरिक था, वह वंशानुगत आधार पर भारत का नागरिक माना जायेगा.

4. पंजीकरण या रजिस्ट्रेशन द्वारा नागरिकता –

- वे व्यक्ति जो भारत में अवैध रूप में न रह रहें हो उन्हें उनके आवेदन पर, भारत सरकार द्वारा निर्धारित शर्तों और प्रतिबंधों के साथ, नागरिक के रूप में पंजीकृत या रजिस्टर किया जा सकता है यदि-

i. वह भारतीय मूल का है और भारत में 7 वर्षों से रह रहा है, या

ii. वह भारतीय मूल का है और अविभाजित भारत में विदेश में रह रहा हो, या

iii. वह भारतीय नागरिक से विवाहित हो और आवेदन करने से पूर्व 7 वर्षों से भारत में रह रहा हो, या

iv. वह किसी भारतीय नागरिक का अवयस्क पुत्र/पुत्री हो, या

v. वह वयस्क हो और उसके माता-पिता भारतीय नागरिक के रूप में पंजीकृत हों, या

vi. वह वयस्क हो और उसके माता-पिता में कोई स्वतंत्र भारत में भारतीय नागरिक रहा हो, और आवेदन करने से पूर्व वह 12 महीने से भारत में रह रहा हो, या

vii. कोई वयस्क व्यक्ति जो 'ओवरसीज सिटीजन ऑफ़ इंडिया कार्ड-होल्डर' (OCI Card holder) के रूप में 5 वर्षों से पंजीकृत हो और आवेदन करने से पूर्व 12 महीने से भारत में रह रहा हो.

- भारत सरकार इस वर्ग में पंजीकरण के लिए कुछ अन्य शर्तें निर्धारित करती है और विशेष परिस्थितियों में आवेदक को उन प्रावधानों से उन्मुक्तियां भी दे सकती है.

5. देशीयकरण या नेचुरलाईजेशन द्वारा नागरिकता –

- कोई वयस्क, जो भारत में अवैध रूप में न रह रहा हो, यदि देशीयकरण द्वारा नागरिकता के लिए आवेदन करता है तो भारत सरकार नागरिकता अधिनियम 1955 की 'तीसरी-अनुसूची' में वर्णित शर्तों के पूरा होने पर उसे नागरिकता दे सकती है.
- यदि भारत सरकार की राय में किसी व्यक्ति ने विज्ञान, दर्शन, कला, साहित्य, विश्व-शान्ति या मानव-विकास में उल्लेखनीय योगदान किया है, तो नागरिकता अधिनियम 1955 की 'तीसरी-अनुसूची' में वर्णित शर्तों में से कुछ या सभी से उन्मुक्ति प्रदान कर उसे नागरिकता दी जा सकती है. ऐसे व्यक्ति को नागरिकता अधिनियम 1955 की 'दूसरी-अनुसूची' में दिए प्रारूप में भारत के प्रति अपनी निष्ठा व्यक्त करनी होगी.

6. क्षेत्रीय आधिग्रहण द्वारा नागरिकता –

- यदि कोई क्षेत्र भारत का अंग बन जाता है, तो भारत सरकार अपने गज़ट में ऐसे लोगों को नागरिक के रूप में अधिसूचित कर सकती है जिनका उस क्षेत्र से सम्बन्ध हो. ऐसे लोग अधिसूचना में इंगित तिथि से भारत के नागरिक होंगे.

भारत में नागरिकता समाप्त कैसे होती है?

किसी भी भारतीय की नागरिकता तीन तरीके से समाप्त हो सकती है.

1. नागरिक द्वारा त्यागने से, या
2. विदेशी नागरिकता प्राप्त करने से, या
3. सरकार द्वारा निरस्त किये जाने से

1. कोई भी वयस्क नागरिक सरकार द्वारा निर्धारित प्रारूप में घोषणा करके अपनी नागरिकता त्याग सकता है. ऐसा करने पर उसके सभी अवयस्क बच्चों की भी नागरिकता ख़त्म हो जाएगी, लेकिन जब वे बच्चे वयस्क होंगे तो एक वर्ष के भीतर - निर्धारित प्रारूप और विधि से घोषणा करके - वे पुनः भारत की नागरिकता प्राप्त कर सकते हैं.
2. यदि कोई नागरिक किसी विदेशी राज्य की नागरिकता स्वेच्छा से प्राप्त करता है तो उसकी भारत की नागरिकता स्वतः समाप्त हो जाएगी.
3. यदि किसी नागरिक ने फर्जी दस्तावेजों के आधार पर पंजीकरण या देशीयकरण के अंतर्गत नागरिकता प्राप्त की है, या वह भारत के संविधान के प्रति निष्ठावान नहीं है या किसी युद्ध में गैर-कानूनी ढंग से भारत के शत्रु का साथ दे, या किसी भी देश में दो वर्ष से अधिक जेल की सज़ा पाया हो, या 7 वर्ष से लगातार बिना किसी शैक्षणिक या अन्य वैध कारण के भारत से बाहर रहा हो, तो सरकार द्वारा उसकी नागरिकता समाप्त की जा सकती है, पर ऐसा करने से पूर्व सरकार उसे एक जांच समिति के समक्ष अपना पक्ष रखने का

मौका देगी और जांच समिति के प्रतिवेदन के आधार पर ही निर्णय लेगी.

नागरिकता कानून में संशोधन

नागरिकता कानून 1955 में दिसम्बर 2019 तक 9 बार संशोधन हो चुके हैं.

1. पहला संशोधन: नागरिकता (संशोधन) अधिनियम 1957 –

इसके द्वारा नागरिकता कानून की 'प्रथम-अनुसूची' में घाना, मलाया और सिंगापुर को भी शामिल किया गया क्योंकि इस दौरान वे भी 'कॉमनवेल्थ' देशों की सूची में शामिल हो गए थे और उनके नागरिकों को भी पारस्परिकता के आधार पर नागरिकता देने का प्रावधान किया गया.

2. दूसरा संशोधन: नागरिकता निरसन एवं (संशोधन) अधिनियम 1960 –

इसके द्वारा नागरिकता कानून 1955 की धारा 19 को समाप्त किया गया. इसके प्रावधानों के निरसन (समाप्ति) से सम्बंधित थी.

3. तीसरा संशोधन: नागरिकता (संशोधन) अधिनियम 1985 –

इस संशोधन के द्वारा असम समझौते के अंतर्गत नागरिकता कानून 1955 में धारा 6A जोड़ा गया. कुछ प्रतिबंधों के साथ बांग्लादेशी लोगों को भारतीय नागरिकता दी गई. इसके अंतर्गत भारतीय मूल के वे लोग जो भारत में 1 जनवरी 1966 के पहले बांग्लादेश में शामिल क्षेत्र से असम आ गए थे और वे भी जिनके नाम 1967 की लोकसभा मतदाता सूची में थे तथा जो तब से भारत में सामान्यतः निवास कर रहे हैं वे 1 जनवरी 1966 से भारत के नागरिक माने जायेंगे.

भारतीय मूल के वे लोग जो 1 जनवरी 1966 से 25 मार्च 1971 के पहले बांग्लादेश में शामिल क्षेत्र से असम आये और तब से सामान्यतः असम में निवास कर रहे हैं तथा विदेशी के रूप में चिन्हित हुए हैं, उनको स्वयं को भारत सरकार द्वारा बनाए नियम के अंतर्गत विदेशी के रूप में पंजीकृत करवाना होगा. यदि उनके नाम किसी भी निर्वाचन सूची में हैं तो उनका नाम उससे काट दिया जायेगा.

ऐसे पंजीकृत बांग्लादेशी लोगों को पंजीकरण से 10 वर्ष तक किसी भी मतदाता सूची में शामिल नहीं किया जायेगा, लेकिन उनको भारत के नागरिकों के अन्य सभी अधिकार (पासपोर्ट प्राप्त करने सहित) एवं दायित्व प्राप्त होंगे. विदेशी के रूप में पंजीकरण की तिथि से 10 वर्ष के बाद वे भारत के पूर्ण नागरिक होंगे.

4. चौथा संशोधन: नागरिकता (संशोधन) अधिनियम 1986 –

इसके द्वारा नागरिकता कानून 1955 की धारा 3 एवं धारा 5 में संशोधन किया गया. धारा 3 में संशोधन कर 1 जुलाई 1987 या उसके बाद भारत में जन्में किसी व्यक्ति को जन्म के आधार पर भारत की नागरिकता मिल जाएगी, यदि उसके जन्म के समय उसके पिता या माता में कोई भी एक भारत का नागरिक होगा.

धारा 5 में संशोधन कर, रजिस्ट्रेशन के आधार पर नागरिकता प्राप्त करने के लिए आवेदक के भारत में निवास की अवधि 6 महीने से बढ़ा कर 5 वर्ष कर दी गई. जो व्यक्ति किसी भारतीय से विवाहित है उनके लिए भी निवास की अवधि बढ़ा कर 5 वर्ष कर दी गई.

5. पांचवा संशोधन : नागरिकता (संशोधन) अधिनियम 1992 –

इसके द्वारा नागरिकता कानून 1955 की धारा 4 में संशोधन किया गया. 1992 नागरिकता संशोधन अधिनियम के लागू होने के बाद भारत के बाहर जन्मे

व्यक्ति को अनुवांशिकता के आधार पर नागरिकता प्रदान की जायेगी, यदि उसके पिता या माता में कोई एक भी भारत का नागरिक होगा. 1992 के पूर्व उसके पिता का भारतीय नागरिक होना ज़रूरी था. यह भी प्रावधान किया गया कि माता या पिता में से यदि कोई भी अनुवांशिक आधार पर भारत का नागरिक होगा, तो या तो विदेश में भारतीय दूतावास में उस व्यक्ति का पंजीकरण हो, या उसके माता या पिता में से कोई एक भारत सरकार की सेवा में कार्यरत हो.

6. छठवां संशोधन : नागरिकता (संशोधन) अधिनियम 2003 –

इसके द्वारा नागरिकता कानून 1955 की धारा 3 में संशोधन कर यह व्यवस्था की गई कि भारत में जन्म के आधार पर नागरिकता प्राप्त करने के लिए व्यक्ति के माता और पिता दोनों का भारतीय नागरिक होना अनिवार्य है, या यदि एक भारत का नागरिक है, तो दूसरे को भारत में गैर-कानूनी ढंग से निवास करते अर्थात अवैध-अप्रवासी नहीं होना चाहिए.

2003 में किये इसी संशोधन के द्वारा नागरिकता कानून में धारा 14A जोड़ा गया, जिसके आधार पर भारत के नागरिकों का रजिस्टर बनाना, उनको राष्ट्रीय पहचान-पत्र जारी करना, राष्ट्रीय जनसँख्या रजिस्टर (एनपीआर) बनाना और नेशनल रजिस्टर ऑफ़ सिटीजन्स (एनआरसी) बनाना भारत सरकार के लिए अनिवार्य किया गया था.

इसी संशोधन द्वारा विदेशों में रहने वाले प्रवासी भारतीयों को 'समुद्र-पारीय भारतीय नागरिक' (Overseas Citizens of India - OCI) की मान्यता भी दी गई और उनके रजिस्ट्रेशन की व्यवस्था की गई, और उनको भारत आने के लिए 'लम्बी अवधि का वीज़ा' तथा कुछ सीमाओं के साथ भारत में अनेक नागरिक अधिकार प्रदान किये गए. ऐसे 'समुद्र-पारीय भारतीय नागरिक' राष्ट्रपति, उप-राष्ट्रपति, लोकसभा, राज्य सभा, राज्यों की विधानसभाओं या विधान परिषदों के चुनाव नहीं लड़ सकेंगे, न ही मतदाता हो सकेंगे. उनको सर्वोच्च न्यायालय या उच्च-न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति का अधिकार न होगा और अनु०16 के अंतर्गत लोक-सेवाओं में समानता का अधिकार न होगा.

7. सातवां संशोधन : नागरिकता (संशोधन) अधिनियम 2005 –

इसी संशोधन द्वारा नागरिकता कानून 1955 से चौथी अनुसूची को हटा दिया गया जिसमें 16 देशों के नाम थे जिनको "निर्दिष्ट देश" (specified countries) के रूप में व्याख्यायित किया गया था.

8. आठवां संशोधन : नागरिकता (संशोधन) अधिनियम 2015 –

इसी संशोधन द्वारा "भारतीय मूल के लोग" (PIO Cardholder) और "समुद्र-पारीय भारतीय नागरिकों" (OCI Cardholder) का फर्क समाप्त कर दिया गया और दोनों को मिला कर "समुद्र-पारीय भारतीय नागरिक कार्ड-होल्डर" (OCI Cardholder) का एक वर्ग बना दिया गया.

9. नवां संशोधन : नागरिकता (संशोधन) अधिनियम 2019 –

दिसम्बर 2019 में किये इस संशोधन द्वारा नागरिकता कानून में गैर-कानूनी अप्रवासी की परिभाषा बदल दी गई और पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफ़ग़ानिस्तान से जो हिन्दू, सिख, बौद्ध, जैन, पारसी और इसाई 31 दिसम्बर 2014 तक भारत आये, उनको भारतीय नागरिकता देने का प्रावधान किया गया.

(लेखक राजनीतिक विश्लेषक एवं सेंटर फॉर द स्टडी ऑफ सोसायटी एंड पॉलिटिक्स के निदेशक हैं. ये उनके निजी विचार हैं.)

नागरिकता संशोधन क़ानून पर बवाल क्यों?

बलबीर पुंज

नागरिकता संशोधन कानून पर उग्र प्रदर्शन के बीच सर्वोच्च न्यायालय ने बुधवार (18 दिसम्बर) को रोक लगाने से इंकार कर दिया। अब अदालत इसकी वैधानिकता को परखेगी। गुरुवार (19 दिसम्बर) को वामपंथियों ने भारत बंद भी बुलाया। अब तक देश में जारी उग्र बवाल में रेलवे, अन्य सार्वजनिक और निजी सम्पत्तियों को भारी क्षति पहुंची है। आगजनी और पथराव की अनेक घटनाओं ने तो कश्मीर की पुरानी तस्वीरों को ताजा कर दिया। मीडिया रिपोर्ट्स के अनुसार इन हिंसक प्रदर्शनों में असामाजिक तत्वों के साथ इस्लामी चरमपंथी भी शामिल हैं। यक्ष प्रश्न है कि आखिर भारतीय विरोधी दलों के साथ मुस्लिम समाज का एक हिस्सा संशोधन के बाद एकाएक क्यों भड़का, जो उनके किसी भी संवैधानिक और नागरिक अधिकारों का हनन नहीं करता है?

संशोधन के अनुसार पाकिस्तान, अफगानिस्तान और बंगलादेश में मजहबी अत्याचारों से प्रताड़ित होकर जो भी वहां के अल्पसंख्यक, हिन्दू, सिख, बौद्ध, ईसाई, पारसी और जैन 31 दिसम्बर, 2014 तक भारत आए हैं, उन्हें भारतीय नागरिकता प्राप्त करने का अधिकार होगा। यह कानून पूर्वोत्तर भारत के उन क्षेत्रों में लागू नहीं होगा, जो 'इनर लाइन परमिट' के अंतर्गत आते हैं और जहां संविधान की छठी अनुसूची लागू है।

आश्रय देने से किसी का क्या बिगड़ता है

मजहबी उत्पीडन के शिकार उपरोक्त लोगों को यदि भारत आश्रय देता है तो इससे किसी का क्या बिगड़ता है? बेबस हिन्दुओं को पनाह देने से भारतीय मुसलमानों या किसी अन्य का अहित कैसे हो सकता है? प्रश्न यह भी उठता है कि यदि भारत में इन 3 इस्लामी देशों के 6 समुदायों को नागरिकता मिल रही है तो उन देशों के मुसलमानों को क्यों नहीं? इसका सीधा उत्तर यह है कि ये तीनों देश घोषित रूप से इस्लामी राष्ट्र हैं, इसलिए वहां मजहबी आधार पर मुस्लिम उत्पीडन की बात हास्यास्पद है।

वास्तव में मुस्लिम समाज के एक वर्ग द्वारा नागरिकता संशोधन कानून के खिलाफ उग्र विरोध पिछले 6 वर्षों से व्याप्त नाराजगी के मिश्रण का विस्फोट है। यह समूह 'हकदारी की भावना' का शिकार है। इस भावना का जन्म और उसे उग्र रूप देने के लिए लगभग पिछले 100 वर्ष की वह राजनीति जिम्मेदार है जिसने इस्लामी कट्टरता के सतत् पोषण को सैकुलरवाद की संज्ञा दी है। इस विकृति की शुरूआत 1921-24 के कालखंड में तब ही हो गई थी जब गांधी जी ने मुस्लिमों को स्वतंत्रता आंदोलन से जोड़ने के उद्देश्य से इस्लामी अभियान 'खिलाफत आंदोलन' का नेतृत्व किया।

क्या इन तीनों इस्लामी देशों में अल्पसंख्यकों का मजहबी शोषण होता है? विभाजन के समय पाकिस्तान में हिन्दू, सिख, बौद्ध और जैन समुदाय वहां की तत्कालीन कुल आबादी का 15.16 प्रतिशत थे, जो 72 वर्ष पश्चात घटकर 1.5-2 प्रतिशत रह गए हैं। एक आंकड़े के अनुसार वर्ष 2002 में पाकिस्तान में सिख जहां 40,000 थे, वे अब घटकर 8000 से नीचे पहुंच गए हैं। इसी तरह बंगलादेश (1971 से पहले पूर्वी पाकिस्तान) में हिन्दू और बौद्ध अनुयायियों की संख्या 1947 में वहां की कुल जनसंख्या का 30 प्रतिशत थी, वह आज 8 प्रतिशत भी नहीं रह गई है। अफगानिस्तान में 1970 के दशक में अफगान हिन्दुओं और सिखों की संख्या लगभग 7 लाख थी, जो 1990 में गृहयुद्ध के बाद निरंतर घटती हुई आज केवल 3000 लोगों तक पहुंच गई है। इन देशों में 'काफिर' अल्पसंख्यकों की दयनीय स्थिति का मुख्य कारण यह है कि कालांतर में उन्हें इस्लाम अपनाने के लिए विवश होना पड़ा है और जिस किसी ने इसकी अवहेलना की, उसे मौत के घाट उतार दिया गया। परिणामस्वरूप, इस तरह के मजहबी उत्पीडऩ से बचने के लिए वहां के अल्पसंख्यक भारत सहित अन्य देशों में पलायन के लिए मजबूर हुए।

घाटी में हिन्दुओं को शेष भारत में पलायन हेतु विवश किया

भारत में कश्मीर इसी दंश का सबसे बड़ा मूर्त रूप है। घाटी में 1980-90 के दशक में जेहाद के नग्न नृत्य ने 5 लाख से अधिक हिन्दुओं को शेष भारत में पलायन हेतु विवश कर दिया। विडंबना देखिए, पिछले 7 दशकों में जिस प्रकार पाकिस्तान, अफगानिस्तान में हिन्दू, सिख, बौद्ध आदि अल्पसंख्यक विरोधी हिंसा के लिए किसी दोषी को सजा नहीं हुई है, वैसे ही कश्मीर में हिन्दुओं के शृंखलाबद्ध नरसंहार के लिए आज तक किसी भी जेहादी को सजा नहीं मिली है।

इस पर स्वयंभू सैकुलरिस्टों का पाखंड देखिए कि जो कांग्रेस महासचिव प्रियंका गांधी गत दिनों दिल्ली में नागरिकता संशोधन एक्ट विरोधी ड्क्षहसक प्रदर्शन में

पुलिसिया कार्रवाई के खिलाफ इंडिया गेट स्थित धरने पर बैठी थीं उन्होंने, उनके परिवार या फिर शीर्ष कांग्रेसी नेता सहित किसी भी स्वघोषित सैकुलरिस्ट ने आज तक कश्मीरी हिन्दुओं को न्याय और उनके अपनों की हत्या करने वाले जेहादियों को सजा दिलाने हेतु धरना तो दूर, इस संबंध में आवाज तक नहीं उठाई है। नागरिकता संशोधन कानून विरोधी देशव्यापी प्रदर्शन और उसका उग्र रूप स्वयंभू सैकुलरिस्ट राजनीतिक दलों के मुस्लिम वोट बैंक हेतु प्रतिस्पर्धा के गर्भ से जनित है। संशोधन कानून के खिलाफ देशभर में प्रदर्शन (हिंसक सहित) करने वालों में अधिकांश प्रदर्शनकारी मुस्लिम समुदाय से हैं। यह स्थिति तब है जब संशोधन से भारतीय मुस्लिमों के संवैधानिक अधिकारों में किसी तरह की कटौती नहीं होने वाली है।

मुस्लिम समाज का एक वर्ग 'हकदारी की भावना' का शिकार

वास्तव में मुस्लिम समाज के एक वर्ग द्वारा नागरिकता संशोधन कानून के खिलाफ उग्र विरोध पिछले 6 वर्षों से व्याप्त नाराजगी के मिश्रण का विस्फोट है। यह समूह 'हकदारी की भावना' का शिकार है। इस भावना का जन्म और उसे उग्र रूप देने के लिए लगभग पिछले 100 वर्ष की वह राजनीति जिम्मेदार है जिसने इस्लामी कट्टरता के सतत् पोषण को सैकुलरवाद की संज्ञा दी है। इस विकृति की शुरूआत 1921-24 के कालखंड में तब ही हो गई थी जब गांधी जी ने मुस्लिमों को स्वतंत्रता आंदोलन से जोडऩे के उद्देश्य से इस्लामी अभियान 'खिलाफत आंदोलन' का नेतृत्व किया।

1937 तक मुस्लिम वर्ग का एक बड़ा हिस्सा पाकिस्तान को लेकर गंभीर नहीं था, किन्तु अगले 10 वर्षों में ड्डक्षहसा, हत्या, बलात्कार और अंग्रेजों व वामपंथियों के कुटिल सहयोग से मुस्लिम समाज देश का विभाजन कर पाकिस्तान लेने में सफल हुआ। कटु सत्य तो यह है कि जितना विरोध स्वघोषित सैकुलरिस्टों ने अयोध्या में राम मंदिर का किया है, यदि उसका चौथाई 'पाकिस्तान आंदोलन' के खिलाफ संघर्ष करता तो संभवत: न ही भारत खंडित होता और न ही पाकिस्तान जैसा विषैला राष्ट्र जन्म लेता। 72 वर्ष पहले मिली इस आसान विजय ने भारतीय उपमहाद्वीप के अधिकांश मुस्लिमों में व्याप्त अलगाववाद और कट्टरवाद को पहले से अधिक पोषित और मजबूत किया है।

अगस्त, 1947 के बाद इस्लामी कट्टरपंथियों के तुष्टीकरण की राजनीति बंद होनी चाहिए थी, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। उस समय कश्मीर में बहुलतावादी शासकीय व्यवस्था को बाजू में रखकर घोर सांप्रदायिक और कट्टर शेख अब्दुल्ला को घाटी में भेज दिया गया। इसके परिणामस्वरूप 4 दशक पश्चात कश्मीरी पंडितों का घाटी से पलायन हो गया, तो देशभर के मौलवी-मौलानाओं के साथ दिल्ली के शाही इमाम ने इस बात का प्रमाण-पत्र देना आरंभ कर दिया कि देश में कौन-सी राजनीतिक पार्टी या नेता सैकुलर है और कौन सांप्रदायिक।

वर्ष 2014 के लोकसभा चुनाव में भी दिल्ली स्थित जामा मस्जिद के शाही इमाम ने मुस्लिम समाज से 'सैकुलरिस्ट' कांग्रेस को वोट देने का फतवा जारी किया था किन्तु उस समय कांग्रेस को स्वतंत्र भारत में अपनी सबसे बुरी पराजय का सामना करना पड़ा। फिर इस वर्ष के आम चुनाव में शाही इमाम द्वारा किसी एक दल को समर्थन नहीं देने का फतवा जारी हुआ। मुसलमानों की राष्ट्रव्यापी गोलबंदी के बीच मोदी सरकार की न केवल वापसी हुई, अपितु 2014 से अधिक सीटों और जनाधार के साथ सत्ता में लौटी। यह मुस्लिम 'वीटो' के लिए सबसे बड़ा झटका था। विगत माह कानूनी रूप से 134 वर्षों से लंबित राम जन्मभूमि मामले में सर्वोच्च न्यायालय का निर्णायक फैसला आया। यह इसलिए संभव हुआ, क्योंकि स्वाभाविक न्यायिक प्रक्रिया राजकीय हस्तक्षेप से पूरी तरह मुक्त रही।

सच तो यह है कि नागरिकता संशोधन कानून का विरोध तो केवल बहाना है। मुस्लिम समाज के एक वर्ग के वास्तविक क्रोध के मुख्य कारण उनके 'वीटो' का निष्क्रिय होना तो उन्हें मिले अधिकारों और शेष भारतीय नागरिकों को प्राप्त अधिकार में आए अंतर का धीर-धीरे समाप्ति की ओर आगे बढऩा है। विरोधी दल इसी सांप्रदायिक और विभाजनकारी मनोवृत्ति का दोहन करते हुए अपने-अपने वोट बैंक को पुख्ता करने के प्रयास में है।

(लेखक राज्यसभा के पूर्व सदस्य एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं. यह लेख पूर्व में पंजाब केसरी में प्रकाशित हुआ है.)

मजहबी उत्पीड़न के शिकार उपरोक्त लोगों को यदि भारत आश्रय देता है तो इससे किसी का क्या बिगड़ता है? बेबस हिन्दुओं को पनाह देने से भारतीय मुसलमानों या किसी अन्य का अहित कैसे हो सकता है? प्रश्न यह भी उठता है कि यदि भारत में इन 3 इस्लामी देशों के 6 समुदायों को नागरिकता मिल रही है तो उन देशों के मुसलमानों को क्यों नहीं? इसका सीधा उत्तर यह है कि ये तीनों देश घोषित रूप से इस्लामी राष्ट्र हैं, इसलिए वहां मजहबी आधार पर मुस्लिम उत्पीड़न की बात हास्यास्पद है।

पाकिस्तान और बांग्लादेश में अल्पसंख्यकों पर अत्याचार

ज्ञानेन्द्र नाथ बरतरिया

1947 के बाद से जिसे हम भारत के रूप में जानते हैं, वह वास्तविक, अविभाजित राजनैतिक भारत का एक बेहद विच्छिन्न मानचित्र है. अफगानिस्तान, पाकिस्तान और बांग्लादेश उससे राजनीतिक तौर पर पृथक किए जा चुके हैं. यह भू-भाग इस्लाम के नाम पर राजनीतिक तौर पर अलग होने के बाद से, सांस्कृतिक तौर पर अलग होने के लिए बौखलाने लगे और वहां बचे-खुचे हिन्दुओं-सिखों को अपनी इस सांस्कृतिक हवस का निशाना बनाने लगे.

सीधी सी बात है, विस्तार आगे है, हिन्दू और सिख ही वह समुदाय हैं, जो उन्हें इस बात की याद दिलाने के लिए काफी थे कि वे अंततः उन हिन्दुओं की ही संतानें हैं, जो अतीत में इस्लाम कबूल कर चुके थे.

शायद इसका, शायद गजवा-ए-हिन्द की अपनी कल्पना का, शायद ऑपरेशन मदीना का, शायद अपनी कुंठा के निवारण का- या शायद इन सभी का एक ही मिलाजुला समाधान उनको नजर आता था कि जो बेबस हिन्दू उनके यहां रह गए हैं, उन पर अधिकतम संभव अत्याचार किए जाए.

हाल ही में अमेरिका के विदेश मंत्रालय ने पाकिस्तान को धार्मिक भेदभाव करने वाले देशों की गंभीर चिंता वाली सूची में रखा है. 2019 में 18 दिसंबर को किए गए इस निर्णय में चीन, ईरान, पाकिस्तान, सऊदी अरब, ताजिकिस्तान और तुर्कमेनिस्तान भी शामिल हैं. यह सूची 1998 के अमेरिकी अंतर्राष्ट्रीय धार्मिक स्वतंत्रता अधिनियम के तहत बनाई गई है और इस सूची में देशों को "धार्मिक स्वतंत्रता के उल्लंघन, व्यवस्थित और भयंकर उल्लंघन में संलग्न या उसके प्रति सहिष्णु" के रूप में शामिल किया गया है. इस श्रेणी के देशों पर वाशिंगटन आर्थिक प्रतिबंध भी लगा सकता है और उन पर और भी कार्रवाई कर सकता है. अमेरिकी विदेश विभाग द्वारा दिसंबर 2017 में "स्पेशल वॉच लिस्ट" में जोड़ा जाने वाला पाकिस्तान पहला और एकमात्र देश था.

ईशनिंदा कानून पर पाकिस्तानी अदालतों की स्थिति क्या है? पहली सीढ़ी वकील की होती है, और कुछ मामलों में, ईशनिंदा के आरोपी व्यक्तियों के परिवारों ने आरोप लगाया है कि सहमत होने और मोटी फीस वसूलने के बाद उनके वकीलों ने कार्यवाही बीच में ही छोड़ दी या जानबूझकर प्रतिवादी के मामले को नुकसान पहुंचाने की कोशिश की. कई मामलों में वकीलों को चलते मुकदमे के दौरान ही मार डाला गया और उनकी हत्या पर कोई कार्रवाई नहीं हुई.

धार्मिक अल्पसंख्यकों के उत्पीड़न का काम पाकिस्तान बहुत व्यस्थित ढंग से, और एक राष्ट्रीय मिशन के तौर पर करता है. सरकारी स्तर पर पाकिस्तान में एक ईशनिंदा कानून है, जो किसी को भी इस आधार पर मौत की सजा का हकदार बना देता है कि वह वास्तविक या काल्पनिक तौर पर अल्लाह पर, मुहम्मद पर या कुरान पर विश्वास नहीं करता है, और इससे अपनी असहमति जता देता है. वैसे कागज में इस कानून में कुछ और भी वाक्य लिखे हैं, लेकिन वास्तव में वह सिर्फ इस्लाम को न मानने वालों पर निजी और सरकारी हिंसा का अधिकार-पत्र भर है.

सरकार और अदालत (?) के इस संरक्षण के साथ ही उन्मादी भीड़ को भी यह लाइसेंस मिल जाता है कि वह हिन्दुओं के प्रति मनमानी हिंसा, लूटमार, बलात्कार, जबरन इस्लाम कबूल करवाने के काम करे. उसे पता है कि उस पर अंकुश लगा सकने की हैसियत न सरकार की है, न अदालत की.

आसिया बीबी कांड ने पाकिस्तान में धार्मिक अल्पसंख्यकों के उत्पीड़न के मामले को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सामने लाने में बड़ी भूमिका निभाई थी. आसिया बीबी एक ईसाई महिला थी (पाकिस्तान में अनेक हिन्दू, जो अधिकांशतः दलित भी हैं, कई बार अपनी जान बचाने के लिए खुद को ईसाई नामों से पेश करते हैं).

गांव की रहे वाली आसिया बीबी खेत में काम कर रही थी, साथ काम करने वाली महिलाओं से उससे कुंए से पानी भर कर लाने को कहा. आसिया पानी ले आई, लेकिन उसने कुछ घूंट पानी पी भी लिया. एक दलित और गैर मुसलमान महिला द्वारा पानी पी लेने पर उन महिलाओं में तीखी कहासुनी हुई.

पांच दिन बाद, पुलिस ने आसिया को उसके घर से घसीटकर निकाला. पुलिस ने और भीड़ ने उसे गांव वालों और घर वालों के सामने बुरी तरह मारा-पीटा, और ईशनिंदा का मामला दर्ज कर दिया गया.

अदालत क्या करती? उसने आसिया को मौत की सजा सुना दी. आसिया पिछले नौ साल से वह जेल में काल कोठरी की सजा काट रही थी.

यह पाकिस्तान में रोजमर्रा की बात है, लेकिन आसिया बीबी का मामला थोड़ा उभर कर सामने आ गया. एक वजह यह भी थी कि उस समय के पंजाब के गवर्नर सलमान तासीर ने कह दिया था कि वे राष्ट्रपति से अपील करेंगे कि आसिया को माफ कर दें. इस पर तासीर के ही बॉडीगार्ड मुमताज हुसैन कादरी ने तासीर के शरीर में 27 गोलियां उतार कर उसे मौत के घाट उतार दिया. यह अन्तर्राष्ट्रीय खबर बनी.

फिर कादरी गिरफ्तार हुआ, तो लाहौर के वकीलों ने अदालत में पेश किए जाते समय उस पर फूल बरसाए. कादरी को हत्या के जुर्म में मौत की सजा सुनाने वाला जज फैसला सुनाते ही परिवार सहित पाकिस्तान छोड़ कर भाग गया. कादरी के जनाजे में लाखों की भीड़ शामिल हुई.

उधर कालकोठरी में नौ साल बिताने के बाद पाकिस्तान की सुप्रीम कोर्ट ने इस आधार पर आसिया बीबी को रिहा करने का आदेश दिया कि उसके खिलाफ कोई सबूत नहीं है.

सबूत न होने का कोई अर्थ ही नहीं होता है. ईशनिंदा के आरोप में हाल ही में सुनाई गई मौत की सजा के एक और मामले में अदालत ने यूनिवर्सिटी के एक लेक्चरर को सबूत न होने पर नहीं, सबूत प्रतिकूल होने पर भी मौत की सजा सुनाई है.

लिहाजा आसिया बीबी को रिहा करने का फैसला भी पाकिस्तान की कट्टरपंथी ब्रिगेड को कबूल नहीं हुआ. पाकिस्तान भर में, और खासतौर पर पंजाब में तुरंत भारी प्रदर्शन, आगजनी, हिंसा और तोड़फोड़ हुई. सेना से विद्रोह करने का आह्वान किया गया. इमरान खान सरकार को

विरोधियों से सुलह का रास्ता अपनाना पड़ा.

ईशनिंदा कानून पर पाकिस्तानी अदालतों की स्थिति क्या है? पहली सीढ़ी वकील की होती है, और कुछ मामलों में, ईशनिंदा के आरोपी व्यक्तियों के परिवारों ने आरोप लगाया है कि सहमत होने और मोटी फीस वसूलने के बाद उनके वकीलों ने कार्यवाही बीच में ही छोड़ दी या जानबूझकर प्रतिवादी के मामले को नुकसान पहुंचाने की कोशिश की. कई मामलों में वकीलों को चलते मुकदमे के दौरान ही मार डाला गया और उनकी हत्या पर कोई कार्रवाई नहीं हुई.

दूसरी सीढ़ी जज की होती है. ट्रायल कोर्ट में पैगंबर मुहम्मद के खिलाफ ईशनिंदा करने के आरोपी एक व्यक्ति का बचाव करने वाले एक वकील ने आईसीजे को एक साक्षात्कार में बताया कि जब उसके मुवक्किल ने, जिस पर पैगंबर मोहम्मद की निंदा का आरोप लगाया गया था, अपनी गवाही में कहा कि उसके मन में पैगंबर मुहम्मद के लिए बहुत प्यार और सम्मान है और वह उनके खिलाफ कभी कुछ नहीं कह सकता है, तो ट्रायल जज ने टिप्पणी की कि अगर प्रतिवादी को पैगंबर मुहम्मद के लिए बहुत प्यार और सम्मान है, तो उसने इस्लाम कबूल क्यों नहीं किया?

और ट्रायल कोर्ट ने अपने फैसले में लिखा कि आरोपी की गवाही को "विश्वसनीय" नहीं माना जा सकता है. जज ने निर्णय में लिखा कि यदि आरोपी का मानना है कि " (वह) पवित्र पैगंबर का सम्मान करता है... तो (आरोपी ने) अब तक (इस्लाम को क्यों नहीं अपनाया)?" ट्रायल कोर्ट ने आरोपी को दोषी ठहराया और उसे मौत की सजा सुनाई .

अगस्त 2000 में, लाहौर उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति नजीर अख्तर ने एक सार्वजनिक व्याख्यान में कहा कि "हम नबी के खिलाफ अपमान की दोषी हर जीभ को काट देंगे".

इन्हीं नजीर अख्तर ने 4 सितंबर 1999 को बयान दिया था कि ईशनिंदा के आरोपियों को बिना किसी मुकदमे के सजा दी जानी चाहिए या उन्हें मार दिया जाना चाहिए और इसके लिए किसी कानून की जरूरत नहीं है. पाकिस्तान के इस जज का मानना है कि एक निंदक की आवाज को चुप कराना हर मुस्लिम का कर्तव्य है.

हिंदुओं को निशाना बनाने की प्रक्रिया और ज्यादा व्यवस्थित और ज्यादा क्रूर किस्म की है. इसमें कम से कम अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर शोर नहीं होता है, और बेबस हिन्दू सब कुछ सहते हुए अपने दुर्भाग्य को कोसते रह जाते हैं. 1947 में विभाजन के समय, पाकिस्तान में लगभग 23% गैर-मुस्लिम नागरिक थे. आज, गैर-मुसलमानो की आबादी लगभग 3% रह गई है, पाकिस्तान में हिंदू आबादी घटकर लगभग 1.5% रह गई है.

हिंदू लड़कियों का अपहरण, बलात्कार और जबरन धर्म परिवर्तन, खास तौर पर सिंध प्रांत में पाकिस्तान के हिंदुओं

गांव की रहे वाली आसिया बीबी खेत में काम कर रही थी, साथ काम करने वाली महिलाओं से उससे कुंए से पानी भर कर लाने को कहा. आसिया पानी ले आई, लेकिन उसने कुछ घूंट पानी पी भी लिया. एक दलित और गैर मुसलमान महिला द्वारा पानी पी लेने पर उन महिलाओं में तीखी कहासुनी हुई. पांच दिन बाद, पुलिस ने आसिया को उसके घर से घसीटकर निकाला. पुलिस ने और भीड़ ने उसे गांव वालों और घर वालों के सामने बुरी तरह मारा-पीटा, और ईशनिंदा का मामला दर्ज कर दिया गया.

के लिए दैनिक जीवन की एक भयानक वास्तविकता है. एशियन ह्यूमन राइट्स वॉच की एक रिपोर्ट के अनुसार, सिंध में हर महीने हिंदू लड़कियों के अपहरण और जबरन धर्मांतरण की लगभग 20-25 घटनाएं घटती हैं.

धार्मिक स्वतंत्रता पर अमेरिकी आयोग (UNCIRF) ने खुलासा किया है कि पाकिस्तान में प्रतिबंधित संगठन धार्मिक अल्पसंख्यकों को निशाना बना रहे हैं.

रिपोर्ट में कहा गया है कि वर्ष 2017 के दौरान पाकिस्तान में ईसाई, सिख, हिंदू और अहमदियों सहित धार्मिक अल्पसंख्यकों को कट्टरपंथी समूहों के हमलों और भेदभाव का निशाना बनाना जारी रहा है.

2017 के दौरान पाकिस्तान में ऐसी घटनाओं में कम से कम 231 लोग मारे गए थे, जबकि कम से कम 691 लोग घायल हुए थे.

रिपोर्ट के अनुसार, "पाकिस्तान की सरकार इन समूहों की रक्षा करने में पर्याप्त रूप से विफल रही, और इसने व्यवस्थित, चल रहे, धार्मिक स्वतंत्रता के उल्लंघन को रोक दिया."

रिपोर्ट में हिंदू विवाह अधिनियम की उपस्थिति के बावजूद हिंदुओं के जबरन धर्मांतरण के सबसे महत्वपूर्ण मुद्दे पर प्रकाश डाला गया है, जो हिंदू नागरिकों के लिए पारिवारिक कानून का अधिकार प्रदान करता है.

इस वर्ष की शुरुआत में, कम से कम 500 हिंदुओं को , जिनमें अधिकांश महिलाएं थीं, कट्टरपंथियों द्वारा धर्म परिवर्तन के लिए मजबूर किया गया था. उन्होंने न केवल उन्हें हिंदू से इस्लाम में शामिल होने के लिए मजबूर किया, बल्कि धर्म परिवर्तन का जश्न मनाने के लिए बड़े-बड़े कार्यक्रम भी आयोजित किए गए.

पाकिस्तान की इस्लामिक हुकूमत में गैर-मुस्लिम नागरिकों को अलग और असमान नागरिक माना जाता है. पाकिस्तान का संविधान और कानून इस्लाम,

पाकिस्तान के लगभग 20 लाख हिंदुओं में से कई लोगों को अपने परिवारों की और अपनी खुद की सुरक्षा के ऐवज में जबरन वसूली करने वालों और स्थानीय नेताओं को फिरौती के रूप में नियमित रकम देने के लिए मजबूर होना पड़ता है. क्लर्क के पद से अधिक का कोई पद किसी हिंदू को प्राप्त नहीं हो सकता है. अगर हिंदू कोई व्यवसाय करना चाहते हैं, तो उन्हें आमतौर पर किसी मुस्लिम को भागीदार बनाना आवश्यक होता है, चाहे वह सक्रिय भागीदार न हो.

सरकारी मजहब और मुसलमानो के लिए अत्यधिक पक्षपातपूर्ण और विशेषाधिकारपूर्ण हैं. हिंदुओं और अन्य अल्पसंख्यकों का व्यवस्थित ढंग से और कानून के तहत अपमान और बहिष्कार किया जाता है. जैसे कि कोई गैर-मुस्लिम वकील संघीय शरीयत कोर्ट में पेश नहीं हो सकता है. यह संवैधानिक प्रावधान है कि पाकिस्तान का राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री कोई मुस्लिम ही होना चाहिए. जिया उल हक सरकार ने अल्पसंख्यकों के मताधिकार को ही निरर्थक बना दिया था. उनके लिए चंद सीटें आरक्षित कर दी गई थीं, उसके अलावा उनका कोई राजनीतिक अधिकार नहीं था. राष्ट्रीय और स्थानीय चुनावों में मुस्लिम मतदाता अपने इलाके के मुस्लिम उम्मीदवारों के लिए अपना वोट डालते हैं, जबकि गैर मुस्लिम वोट केवल गैर मुस्लिम उम्मीदवारों के बीच डाल सकते हैं, क्योंकि मुसलमानो और गैर मुस्लिमों के लिए अलग-अलग निर्वाचक मंडल मौजूद हैं. मुख्यधारा के मुस्लिम दलों में गैर मुस्लिमों की भागीदारी नगण्य है.

सतत विकास नीति संस्थान (SDPI), इस्लामाबाद द्वारा हाल ही में प्रकाशित एक रिपोर्ट में कहा गया है कि

"पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों के अधिकांश भाग में जो चार प्राथमिक विषय सबसे अधिक प्रभावशाली तरीके से उभर कर सामने आते हैं ... वह यह हैं कि पाकिस्तान सिर्फ मुसलमानो के लिए है. सभी छात्रों को इस्लामियत जबरन पढ़ाई जाती है, चाहे उनकी अपनी आस्था कुछ भी हो. उनके लिए कुरान पढ़ना अनिवार्य है. पाकिस्तान की विचारधारा (आस्था) को पाकिस्तान के लोगों की आस्था के रूप में स्थापित किया जाना चाहिए, और हिंदुओं और भारत के खिलाफ नफरत पैदा की जानी चाहिए, और छात्रों को जेहाद और शहादत का रास्ता अपनाने के लिए प्रेरित किया जाता है." रिपोर्ट में आगे कहा गया है कि " भारत और हिंदुओं के खिलाफ नफरत पाकिस्तान की विचारधारा पर जोर देने का एक अनिवार्य घटक है.... "

पाकिस्तान के लगभग 20 लाख हिंदुओं में से कई लोगों को अपने परिवारों की और अपनी खुद की सुरक्षा के ऐवज में जबरन वसूली करने वालों और स्थानीय नेताओं को फिरौती के रूप में नियमित रकम देने के लिए मजबूर होना पड़ता है. क्लर्क के पद से अधिक का कोई पद किसी हिंदू को प्राप्त नहीं हो सकता है. अगर हिंदू कोई व्यवसाय करना चाहते हैं, तो उन्हें आमतौर पर किसी मुस्लिम को भागीदार बनाना आवश्यक होता है, चाहे वह सक्रिय भागीदार न हो.

कई हिंदू मंदिरों को पाकिस्तान में सरकारी कार्यालयों में बदल कर अपवित्र, नष्ट या परिवर्तित कर दिया गया है. अकेले 1992 में, भारत में सांप्रदायिक दंगों के जवाब में, जिसमें पाकिस्तानी हिंदुओं की कोई भूमिका नहीं थी, पाकिस्तान में सैकड़ों हिंदू मंदिरों को नष्ट कर दिया गया. इन मंदिरों के पुनर्निर्माण के आधिकारिक वादों के बावजूद, कई मामलों में कोई कार्रवाई नहीं की गई है या नाममात्र की और दिखावटी काम हुआ है. हिंदू मंदिरों और जमीनों पर अवैध अतिक्रमण, हिंदू लड़कियों के साथ छेड़छाड़ और

हिंदुओं को निशाना बनाने की प्रक्रिया और ज्यादा व्यवस्थित और ज्यादा क्रूर किस्म की है. इसमें कम से कम अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर शोर नहीं होता है, और बेबस हिन्दू सब कुछ सहते हुए अपने दुर्भाग्य को कोसते रह जाते हैं. 1947 में विभाजन के समय, पाकिस्तान में लगभग 23% गैर-मुस्लिम नागरिक थे. आज, गैर-मुसलमानो की आबादी लगभग 3% रह गई है, पाकिस्तान में हिंदू आबादी घटकर लगभग 1.5% रह गई है.

अपहरण, अपहरण के मामलों में भारी फिरौती की मांग, और झूठे आरोपों पर हिंदुओं की लगातार गिरफ्तारियां पाकिस्तान में आम हो गई हैं.

स्थिति बांग्लादेश में भी भिन्न नहीं है. बांग्लादेश में भारी और बड़े छुरों से, जो मांस काटने में प्रयोग होते हैं, बंदूकों और बमों से हिन्दुओं पर हमले आम हैं. अंतर सिर्फ यह है कि यहां सरकार इन हत्याओं की नपी-तुली आलोचना कर देती है, लेकिन हमलों की जिम्मेदारी लेने वालों में इस्लामिक स्टेट, अलकायदा, अंसारुल्लाह बांग्ला टीम, अंसार अल-इस्लाम, लश्कर-ए-तोइबा, अल्लाहर दल, अहले हदीथ अंदोलन बांग्लादेश और हिक्मत-उल-जिहाद जैसे अंतर्राष्ट्रीय आतंकवादी संगठन भी शामिल रहते हैं. इन संगठनों में रोहिंग्या आतंकवादी भी शामिल हैं. 22 फरवरी 2016 को इस्लामिक स्टेट ने बांग्लादेश में भारत से सटे उत्तरी पंचगढ़ जिले के देबीगंज उप जिले के सोनपोटा गांव में एक हिंदू मंदिर के प्रधान पुजारी 50 वर्षीय जगनेश्वर राय की निर्मम हत्या करने की जिम्मेदारी ली. इस पुजारी की बिल्कुल उस शैली में हत्या की गई, जैसे मध्य पूर्व में हत्याएं की जाती रही हैं. इस हमले में दो हिंदू भक्तों को भी अधमरा कर दिया गया. हत्या के बाद आईएसआईएस ने अरबी भाषा में बयान जारी किया.

बांग्लादेश की स्थिति ऐसे समझें. अंतर्राष्ट्रीय अपराध न्यायाधिकरण ने 28 फरवरी 2013 को जमात-ए-इस्लामी के उपाध्यक्ष दिलावर हुसैन सईदी को 1971 के बांग्लादेश मुक्ति युद्ध के दौरान युद्ध अपराधों के लिए मौत की सजा सुनाई. सजा सुनाए जाने के बाद जमात-ए-इस्लामी और उसके छात्र संगठन- इस्लामिक छत्र शिबिर के कार्यकर्ताओं ने देश के विभिन्न हिस्सों में हिंदुओं पर हमला शुरु कर दिया. अल्पसंख्यकों की संपत्तियों को लूटा गया, 20 जिलों में 1500 से ज्यादा हिंदू घरों को जलाकर राख कर दिया गया और 50 से अधिक हिंदू मंदिरों को उजाड़ कर आग लगा दी गई. अकेले चटगाँव और नोआखली में कम से कम 60 घरों, छह मंदिरों और कई दर्जन दुकानों में आग लगा दी गई और तोड़फोड़ की गई. कीमती सामान और फर्नीचर लूट लिए गए. पुलिस कम से कम डेढ़ घंटे बाद तब आई, जब यह सब खत्म हो गया.

बांग्लादेश जातीय हिंदू महाजोट की एक रिपोर्ट के अनुसार अकेले 2017 में बांग्लादेश में हिंदू समुदाय के कम से कम 107 लोग मारे गए और 31 लोग लापता हो गए. यह संख्या साल दर साल बढ़ती जा रही है. रिपोर्ट के अनुसार 2017 में हिंदू समुदाय के 782 लोगों को या तो देश छोड़ने के लिए मजबूर किया गया या देश छोड़ने की धमकी दी गई. 23 अन्य को इस्लाम कबूल करने के लिए मजबूर किया गया. कम से कम 25 हिंदू महिलाओं और बच्चों के साथ बलात्कार किया गया, जबकि वर्ष 2017 के दौरान 235 मंदिरों और मूर्तियों के साथ बर्बरता हुई. 2017 में हिंदू समुदाय के साथ अत्याचार के कुल 6474 मामले दर्ज हैं.

20 जून 2016 को बांग्लादेश के राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के निवृतमान अध्यक्ष प्रोफेसर मिजानुर रहमान ने कहा- "(बांग्लादेश में) धार्मिक अल्पसंख्यकों के साथ जिस तरह का व्यवहार हो रहा है, मैं नहीं मानता कि उस पर सरकार की प्रतिक्रिया पर्याप्त है. अगर यह (इसी तरह) चलता रहा, तो 15 वर्ष के भीतर बांग्लादेश में एक भी हिन्दू नहीं बचेगा."

बांग्लादेश में हिन्दू जनसंख्या अब वहां की कुल जनसंख्या का 7 प्रतिशत रह गई है. फरवरी 1950 में हुए हिन्दुओं के नरसंहार के बावजूद, 1951 की जनगणना के अनुसार तब पूर्वी पाकिस्तान में 22 प्रतिशत हिन्दू थे, लेकिन अक्टूबर 1958 में लगे मार्शल लॉ शासन के दौरान उत्पीड़न और यातनाओं के बाद पूर्वी पाकिस्तान में हिंदू जनसंख्या में 3.5% की गिरावट आई और 1961 में पूर्वी पाकिस्तान में हिंदू जनसंख्या मात्र 18.5 प्रतिशत रह गई. बांग्लादेश बनने के बाद, 1974 में यह आंकड़ा घटकर 14 प्रतिशत रह गया. 1961-1974 के दौरान भी, 1971 में मुक्ति की लड़ाई सहित, हिंदू आबादी में 5% की गिरावट आई और 1974 में हिंदू जनसंख्या 13.5% पर आ गई और अंतिम 2011 की जनगणना के अनुसार बांग्लादेश में मात्र 8.4 प्रतिशत हिन्दू रह गए हैं. बांग्लादेश में आज हिंदू आबादी जिस गति से कम हो रही है, उसके मुताबिक 2050 तक बांग्लादेश पाकिस्तान की स्थिति में पहुंच जाएगा, जहां हिन्दुओं की आबादी उंगलियों पर गिनी जा सकेगी.

अगस्त 1975 में ढाका में तख्तापलट के बाद, 20 अगस्त 1975 को बीबीसी को दिए गए साक्षात्कार में तत्कालीन भारतीय प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी ने स्वीकार किया था कि बांग्लादेश की इस्लामी सरकार के कारण हिंदू अल्पसंख्यक भी बांग्लादेश छोड़ सकते हैं, जो भारत के लिए आर्थिक और राजनीतिक समस्याएं पैदा करेंगे."

भारत इसे जानता था, लेकिन उसने इस पर कोई कार्यवाही नहीं की.

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं. ये उनके निजी विचार हैं.)

नागरिकता कानून और कांग्रेस का बेजा विरोध

रमेश कुमार दुबे

जो कांग्रेस पार्टी अपने स्थापना दिवस पर संविधान की दुहाई देते हुए नागरिकता संशोधन अधिनियम, राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर और राष्ट्रीय नागरिकता रजिस्टर का विरोध कर रही है, वही कांग्रेस इन प्रावधानों की जननी रही है. नेहरू-लियाकत समझौता, असम में एनआरसी और 2011 में एनपीआर की शुरूआत कांग्रेस की ही देन हैं. कांग्रेस पार्टी की भांति उसके युवा नेता भी इन मुद्दों पर झूठ बोलकर भ्रम फैला रहे हैं. यह स्थिति तब है जब राफेल विमान समझौते पर झूठ फैलाने के कारण राहुल गांधी उच्चतम न्यायालय के समक्ष माफी मांग चुके हैं.

आजादी के सत्तर साल तक कांग्रेस बिजली, सड़क, पानी के नाम पर वोट मांगती रही, लेकिन ये बुनियादी सुविधाएं आम लोगों से दूर ही रहीं. दूसरी ओर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने महज पांच साल के भीतर करोड़ों सुविधाविहीन लोगों तक बिजली, सड़क, शौचालय, रसोई गैस, बैंक, बीमा जैसी सुविधाएं बिना किसी भेदभाव के पहुंचा दी. सबसे बड़ी बात यह रही कि इन सुविधाओं को हासिल करने के लिए गरीबों को किसी प्रकार की रिश्वत नहीं देनी पड़ी और गरीबों को सुविधाएं उपलब्ध कराने वाली योजनाएं तय समय से पहले पूरी हुईं. इसमें सबसे बड़ी उपलब्धि हर गांव तक बिजली पहुंचाने की कामयाब योजना रही. इसका परिणाम यह हुआ कि 2019 के लोक सभा चुनाव में जनता ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और भारतीय जनता पार्टी को पूर्ण बहुमत दिया.

चूंकि अब बिजली, सड़क, शौचालय, रसोई गैस जैसी बुनियादी सुविधाएं लगभग सभी भारतीयों तक पहुंच चुकी हैं, तो विपक्ष के पास चुनावी वायदे के लिए कुछ बचा ही नहीं है. यही कारण है कि विपक्ष नकारात्मक राजनीति पर उतर आया है. मोदी सरकार द्वारा पड़ोसी देशों के अल्पसंख्यकों को नागरिकता देने और राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर ने मोदी विरोधी राजनीति को एक नया आयाम दे दिया है. इन मुद्दों पर सबसे मुखर विरोध कांग्रेस पार्टी का रहा है जिसने 1947 से ही लगातार धार्मिक प्रताड़ना से पीड़ित शरणार्थियों को नागरिकता देने का समर्थन किया. 1950 के नेहरू-लियाकत समझौते की तो नींव ही शरणार्थियों को नागरिकता देने पर थी. इसी तरह उच्चतम न्यायालय के आदेश से असम में लागू हुए एनआरसी का कांग्रेस ने समर्थन किया है. इतना ही नहीं 2011 की जनगणना के समय राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर की शुरूआत भी कांग्रेस नीति संप्रग सरकार के दौरान हुई थी. स्पष्ट है इन मुद्दों पर कांग्रेस का विरोध अपनी ही नीतियों की आलोचना करने वाला है.

18 दिसंबर 2003 को राज्य सभा में विपक्ष के नेता डॉक्टर मनमोहन सिंह ने बाजपेयी सरकार में तत्कालीन उप प्रधानमंत्री लाल कृष्ण आडवाणी से कहा था मैं

आजादी के सत्तर साल तक कांग्रेस बिजली, सड़क, पानी के नाम पर वोट मांगती रही, लेकिन ये बुनियादी सुविधाएं आम लोगों से दूर ही रहीं. दूसरी ओर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने महज पांच साल के भीतर करोड़ों सुविधाविहीन लोगों तक बिजली, सड़क, शौचालय, रसोई गैस, बैंक, बीमा जैसी सुविधाएं बिना किसी भेदभाव के पहुंचा दी. सबसे बड़ी बात यह रही कि इन सुविधाओं को हासिल करने के लिए गरीबों को किसी प्रकार की रिश्वत नहीं देनी पड़ी और गरीबों को सुविधाएं उपलब्ध कराने वाली योजनाएं तय समय से पहले पूरी हुईं.

शरणार्थियों से हो रहे बर्ताव के बारे में कुछ कहना चाहता हूं "देश के बंटवारे के बाद बांग्लादेश जैसे देशों में अल्पसंख्यकों को आघात का सामना करना पड़ रहा है. ऐसे लोगों को भारतीय नागरिकता देने की प्रक्रिया ज्यादा उदार होनी चाहिए." अगस्त 2012 में कई भाजपा सांसदों द्वारा लोक सभा में पूछे गए लिखित सवाल के जवाब में यूपीए सरकार ने बताया था कि पांच साल की उम्र के ऊपर के सभी लोगों की उंगलियों और दोनों आंखों की पुतलियों के निशान लिए जांएगे. एनपीआर डाटा से आधार को जोड़ा जाएगा और ऐसे नामों के साथ तैयार लिस्ट को समाज, समुदाय, ग्राम सभा, वार्ड समिति के बीच जारी किया जाएगा. उत्तर में यह भी बताया गया है कि एनपीआर कार्ड मिलने का अर्थ यह नहीं होगा कि हर कोई भारतीय नागरिक है.

जो कांग्रेस धर्म के आधार पर भेदभाव झेल रहे अल्पसंख्यकों को नागरिकता देने की मुखर समर्थक रही हो वही कांग्रेस नागरिकता संशोधन अधिनियम पर हिंसक गतिविधियों को बढ़ावा दे रही है तो इसका कारण वोट बैंक की राजनीति ही है. दरअसल अपनी सिमटती राजनीतिक जमीन को देखते हुए कांग्रेस समझ गई है कि सकारात्मक आधार पर मोदी सरकार का विरोध करके सत्ता में आना मुश्किल है. इसीलिए वह अपने सिमटते जनाधार को धार्मिक विभाजन को बढ़ावा देकर मजबूत बनाने की कवायद में जुटी है, लेकिन ऐसा करते समय कांग्रेस भूल जाती है कि इतिहास को कुछ समय के लिए झुठलाया तो जा सकता है, लेकिन मिटाया नहीं जा सकता. यही कारण है कि इन मुद्दों पर कांग्रेस की असलियत सामने आने के बाद उसके विरोध की आवाज मंद पड़ गई.

कांग्रेस ही नहीं कई क्षेत्रीय दल भी इन मुद्दों पर मोदी सरकार को घेरने की कांग्रेसी कवायद में एक साथ खड़े हैं. इसका कारण है कि मोदी सरकार द्वारा शुरू की गई विकास की राजनीति का लाभ बिना किसी भेदभाव के सभी भारतीयों तक पहुंचा हैं इसलिए जाति की राजनीति करने वाले क्षेत्रीय दलों के पास अगड़े, पिछड़े, दलित जैसे संकीर्ण आधारों पर राजनीति चमकाने के मौके नहीं रह गए हैं. यही कारण है कि वैचारिक रूप से कांग्रेस विरोधी होते हुए भी कई क्षेत्रीय दल मोदी विरोध के नाम पर कांग्रेस के साथ नकारात्मक राजनीति कर रहे हैं.

कांग्रेस की झूठ की राजनीति 70 साल तक इसलिए कामयाब रही क्योंकि उसके झूठ को पकड़ने और सामने लाने वाला सशक्त विकल्प नहीं था. अब मोदी सरकार विकास की राजनीति के जरिए कांग्रेस की असलियत उजागर कर रही है इसलिए उसकी राजनीतिक जमीन खिसकती जा रही है. नागरिकता कानून पर भी कांग्रेस की असलियत सामने आने पर उसकी विरोध की राजनीति उलटी पड़ती जा रही है.

(लेखक केन्द्रीय सचिवालय में अधिकारी हैं। ये उनके निजी विचार हैं।)

नया इतिहास रचती मोदी और शाह की जोड़ी

प्रदीप सिंह

भाजपा विरोधियों का यह आरोप रहा है कि वह देश का संविधान और इतिहास बदलना चाहती है. विरोधी बार-बार ऐसे मुद्दे उठाते रहते हैं जिससे लगे कि उनके आरोप में दम है. विपक्ष का सारा ध्यान संविधान और इतिहास की किताबों, प्रतीकों पर है. उन्हें अब पता चल रहा है कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और गृहमंत्री अमित शाह न केवल देश बदल रहे हैं, बल्कि नया इतिहास भी रच रहे हैं. भाजपा और संघ परिवार के एजेंडे को आज जैसी राष्ट्रीय स्वीकृति पहले कभी नहीं मिली. आज मोदी सरकार के काम का विरोध करने वालों को पहले सफाई देनी पड़ती है कि वह राष्ट्रहित के खिलाफ नहीं है. हालत यह है कि पिछले करीब छह साल से सांप्रदायिकता शब्द राष्ट्रीय विमर्श से गायब हो गया है.

अवैध मुसलमानो के हक में क्यों खड़ा है विपक्ष

मोदी सरकार देश का मानस बदल रही है. इससे भी बड़ी बात यह है कि लोग इस बदलाव के लिए तैयार हैं. वास्तव में यह कहना ज्यादा ठीक होगा कि वह भारतीय समाज को उसकी जड़ों की ओर वापस ले जा रही है. जो काम आजादी के बाद ही शुरू हो जाना चाहिए था वह अब हो रहा है. इस देश की आत्मा भारतीय संस्कृति में बसती है. पिछले सात दशकों में हिंदू विरोध और धर्म निरपेक्षता पर्यायवाची बन गए थे. नागरिकता संशोधन विधेयक का विरोध करने वाले पता नहीं क्यों बांग्लादेश और पाकिस्तान से अवैध रूप से आए मुसलमानो के हक के लिए खड़े हैं?

क्यों बंद किए गए दरवाजे

भाजपा का मानना है कि देश के धर्म के आधार पर हुए बंटवारे का एजेंडा पूरा नहीं हुआ है. यही बात संविधान सभा में सरदार भूपिंदर सिंह मान ने उठाई थी. उन्होंने कहा था कि पाकिस्तान से आने वाले हिंदुओं- सिखों को भारतीय नागरिकता देने के लिए 19 जुलाई 1948 को कट ऑफ डेट क्यों तय किया गया है? इसके बाद पाकिस्तान में जिन हिंदुओं-सिखों का उत्पीड़न होगा उनके लिए भारत के दरवाजे क्यों बंद किए गए हैं? पीएस देशमुख ने तो यहां तक कहा कि हिंदू और सिख जहां भी हों, अगर किसी और देश के नागरिक न हों तो उन्हें भारत की नागरिकता मिलनी चाहिए.

पलायन की समस्या की शुरुआत

देश के बंटवारे के बाद पलायन की समस्या की शुरुआत उस समय हुई जब दिसंबर 1949 में भारत पाकिस्तान के आर्थिक संबंध टूट गए. दस लाख लोगों ने दोनों देशों की सीमा पार की. इसके बाद आठ अप्रैल 1950 को नेहरू-लियाकत समझौता हुआ. तय हुआ कि दोनों देश अपने यहां के अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा करेंगे. इतना ही नहीं, यह भी कहा गया है कि जो भागकर आए हैं उन्हें लौटकर अपनी संपत्ति बेचने का अधिकार होगा, अपहृत औरतों को लौटाना होगा और जबरन कराया गया धर्म परिवर्तन अमान्य किया जाएगा, लेकिन कुछ ही महीने बाद पाकिस्तान से दस लाख हिंदू भागकर भारत आ गए. तब सरदार पटेल ने पाकिस्तान को धमकी दी कि यह एकतरफा नहीं चल सकता. पाकिस्तान नहीं सुधरा तो उसे नतीजा भुगतना होगा. इसके बाद पलायन का सिलसिला रुका, पर 1950 में सरदार का निधन हो गया. इसके बाद क्या हुआ, यह बताने की जरूरत नहीं है. अतीत से लौटकर वर्तमान में आते हैं.

मोदी-शाह पर लोग भरोसा करने को तैयार

घुसपैठ का मुद्दा हमेशा से भाजपा के एजेंडे में रहा है, लेकिन उसके समर्थक भी मानते थे कि इस मुद्दे पर भाजपा जो भी कहती है वह एक राजनीतिक दिखावा है. 2019 के लोकसभा चुनाव के वक्त अमित शाह हर चुनावी सभा में कहते थे कि एक-एक घुसपैठिये को चुन-चुन कर बाहर निकालेंगे. तब भी कम ही लोगों को यकीन था कि ऐसा हो सकता है, लेकिन फिर से चुनकर आने पर तीन तलाक, कश्मीर में अनुच्छेद 370 एवं 35-ए पर सरकार के कदम के बाद मोदी-शाह की विश्वसनीयता ऐसी हो गई है कि वे जो भी वादा करेंगे, लोग भरोसा करने को तैयार हो जाएंगे.

नागरिकता बिल पर लोकसभा में बहस के दौरान गृहमंत्री ने एक बार नहीं कई बार कहा कि कैब कोई बहाना नहीं है, एनआरसी (नागरिकों का राष्ट्रीय रजिस्टर) लाने का. उन्होंने कहा कि पूरे देश में एनआरसी आएगा और 2024 के लोकसभा चुनाव से पहले यह काम पूरा कर लिया जाएगा. यह करने का हमें जनादेश प्राप्त है.

राजनीतिक हित-अहित की चिंता नहीं करती भाजपा

पिछले साढ़े पांच साल में इस सरकार ने नोटबंदी, जीएसटी, सर्जिकल स्ट्राइक, एयर स्ट्राइक, आइबीसी, रेरा, तीन तलाक, जम्मू- कश्मीर से अनुच्छेद 370 एवं 35-ए हटाने और अब नागरिकता संशोधन विधेयक जैसे बहुत से कदम उठाए हैं. इनके जरिये सरकार ने एक संदेश दिया है कि वह जिन बातों को देशहित में समझती है उसे करने के लिए वह राजनीतिक हित-अहित की चिंता नहीं करती. सरकार और भाजपा पर आरोप है कि नागरिकता संशोधन विधेयक और एनआरसी भारत को हिंदू राष्ट्र या धुर दक्षिणपंथ की ओर ले जा रहा है. वास्तविकता इसके इतर है.

दरअसल देश उन नव औपनिवेशिक कुलीनों के प्रभाव से मुक्त हो रहा है, जिन्होंने देशवासियों को भारतीय संस्कृति से दूर रखने का षडयंत्र किया. इस वर्ग को अपने अस्तित्व पर खतरा नजर आ रहा है. इसकी अभिव्यक्ति कभी कांग्रेस जैसे राजनीतिक दलों, कभी एनजीओ, कभी मुट्ठीभर बुद्धिजीवियों की अपीलों और सुप्रीम कोर्ट में कथित जनहित याचिकाओं के रूप में सामने आती रहती है.

कांग्रेस सरकार ने करवाया अमित शाह का परिचय

मामला कश्मीर में बदलाव का हो या नागरिकता संशोधन विधेयक का, अमित शाह के जिक्र के बिना पूरी नहीं हो सकती. अमित शाह से देश के लोगों का पहला परिचय कांग्रेस सरकार ने करवाया, एक झूठे मामले में फंसाकर. उनका दूसरा परिचय 2014 के लोकसभा चुनाव में उत्तर प्रदेश का प्रभारी बनने पर हुआ. उनका तीसरा परिचय भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष के रूप में हुआ. उनका चौथा परिचय देश के गृहमंत्री के रूप में हुआ. उन्होंने प्रत्येक अवसर पर लोगों को चौंकाया. उनकी बेबाकी से तो लोग परिचित हो चुके थे, लेकिन लोकसभा में आने के बाद एक सांसद के रूप में उनकी क्षमता हैरान करने वाली है.

पहले अनुच्छेद 370 और फिर नागरिकता संशोधन विधेयक पर वे जिस स्पष्टता, आत्मविश्वास, दृढ़ता और तथ्यों के आधार पर बोले वैसा कब कौन गृहमंत्री बोला था, याद करना कठिन है. उद्योगपति राहुल बजाज ने एक कार्यक्रम में अमित शाह से पूछा था कि लोग उनसे डरते क्यों हैं? वास्तविकता यह है कि सच और खरी बात कहने वालों से लोग अक्सर डरते ही हैं.

नागरिकता विधेयक के कानून बनने, एनआरसी लागू होने और अयोध्या में राम मंदिर पर सुप्रीम कोर्ट के फैसले के बाद देश के बहुसंख्यक समाज के मन में अपने ही देश में दोयम दर्जे का नागरिक होने का दंश निकल रहा है. इनका विरोध करने वालों के एक बात समझ लेनी चाहिए कि इस देश में बहुसंख्यक समाज की भावनाओं की उपेक्षा करके धर्म निरपेक्ष समाज की स्थापना नहीं हो सकती.

(लेखक राजनीतिक विश्लेषक एवं स्तंभकार हैं. यह लेख पूर्व में दैनिक जागरण में प्रकाशित हुआ है.)

वैचारिक योद्धा अमित शाह

हर्ष वर्धन त्रिपाठी

नागरिकता संशोधन विधेयक देश के दोनों सदनों से मंजूर हो गया और इसी के साथ भारत के पड़ोसी 3 देशों- पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफगानिस्तान में धार्मिक आधार पर प्रताड़ित अल्पसंख्यकों को भारत की नागरिकता प्राप्त करने का अधिकार मिल गया है. विपक्ष ने इस बात पर हल्ला-हंगामा किया कि यह सिर्फ मुसलमानो के विरोध वाला विधेयक है, जबकि सरकार ने बार-बार स्पष्ट किया कि भारत से पाकिस्तान के विभाजन के बाद से ही लाखों की संख्या में हिन्दुओं सहित दूसरे अल्पसंख्यकों को पाकिस्तान और बाद में पाकिस्तान से विभाजित हुए बांग्लादेश में धार्मिक प्रताड़ना झेलनी पड़ रही थी और अलग-अलग समय पर भले ही भारतीय नागरिकता के कानून में संशोधन हुए हों, लेकिन कोई स्पष्ट समाधान करने की कोशिश आज तक किसी भी सरकार ने नहीं की. भारतीय जनता पार्टी पर विपक्ष यह भी आरोप लगा रहा है कि असम एनआरसी से बाहर हुए हिन्दुओं को नागरिकता देने के लिए यह सब किया जा रहा है. विपक्ष के आरोपों में उनकी चिन्ता भी दिखती है कि इससे नरेंद्र मोदी और अमित शाह भारतीय जनता पार्टी की उस छवि को और मजबूत कर रहे हैं कि हम अपने मतदाता से किए हुए हर वायदे को पहला मौका मिलते ही पूरा करते हैं. इससे नरेंद्र मोदी और अमित शाह की वैचारिक प्रतिबद्धता ज्यादा मजबूती से स्थापित होती दिख रही है. अनुच्छेद 370 हटाने के बाद पड़ोसी मुस्लिम देशों में अल्पसंख्यकों पर धार्मिक आधार पर अत्याचार के आधार पर नागरिकता संशोधन विधेयक लाकर नरेंद्र मोदी और खासकर गृहमंत्री अमित शाह ने स्पष्ट कर दिया है कि भारतीय जनता पार्टी को जनता ने इनता जबरदस्त समर्थन लगातार दो लोकसभा चुनावों में क्यों दिया है. इस बात को देश के गृहमंत्री अमित शाह ने सदन के बाहर और दोनों सदनों में नागरिकता संशोधन विधेयक पर चर्चा का जवाब देते हुए सलीके से रेखांकित भी किया. अमित शाह ने बहुत साफ कहा कि हमारे घोषणापत्र का यह हिस्सा था और हम इसी पर चुनाव जीतकर आए हैं. राष्ट्रवाद, राममंदिर, अनुच्छेद 370 हो या फिर बांग्लादेशी घुसपैठियों का मसला हो, भारतीय जनता पार्टी पर हमेशा यह आरोप लगता रहा है कि पार्टी इसे सिर्फ लटकाए रखना चाहती है. अब लगातार नरेंद्र मोदी की सरकार फैसले लेकर इस आरोप को पूरी तरह से ध्वस्त करने में कामयाब रही है.

नागरिकता संशोधन विधेयक के इस फैसले के साथ, कभी हां, कभी ना का रिश्ता रखकर शिवसेना ने भारतीय जनता पार्टी को मुश्किल में डालने की कोशिश जरूर की, लेकिन शिवसेना नेता संजय राउत का राज्यसभा में बोला डायलॉग शिवसेना की ही राजनीति पर भारी पड़ता दिख रहा है. शिवसेना नेता संजय राउत को राज्यसभा में 3 मिनट का समय आवंटित था और उपसभापति हरिबंश के बार-बार याद दिलाने के बावजूद संजय राउत मुद्दे के अलावा सारी बात करते रहे. संजय राउत डायलॉग मारकर ही खुद को खुश करते दिखे. संजय राउत ने राज्यसभा में कहा कि आप जिस स्कूल में पढ़ रहे हो, वहां के हम हेडमास्टर हैं.

डायलॉग मारकर संजय राउत सहित शिवसेना के तीनों सांसद सदन से बाहर निकल गये, लेकिन जब नागरिकता संशोधन विधेयक पर मतदान हुआ तो समझ में आया कि राजनीतिक परिदृश्य में कौन हेडमास्टर है और कौन उद्दण्ड विद्यार्थी. शिवसेना ने भारतीय जनता पार्टी का साथ बेहद महत्वपूर्ण मौके पर छोड़ा तो शिवसेना की जगह ले रही बीजू जनता दल मजबूती के साथ भाजपा के साथ खड़ी नजर आई. बीजू जनता दल, जनता दल यूनाइटेड और एआईएडीएमके का नागिरकता संशोधन विधेयक पर भारतीय जनता पार्टी के साथ खड़ा होना प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और खासकर गृहमंत्री अमित शाह की बड़ी राजनीतिक सफलता है. यह सफलता इसलिए भी और बड़ी हो जाती है क्योंकि इस विधेयक को विरोधी खांटी हिन्दू हितों को बचाने वाला विधेयक बता रहे थे और ऐसे में बीजू जनता दल, जनता दल यूनाइटेड और एआईएडीएमके का भारतीय जनता पार्टी के साथ खड़े होना भारतीय राजनीति के एक और महत्वपूर्ण परिवर्तन के तौर पर याद किया जाएगा.

अमित शाह ने राज्यसभा में एक बात और पुख्ता तरीके से स्थापित करने की सफल कोशिश की. कांग्रेस सहित विपक्षी दल इसमें मुस्लिमों के शामिल न रहने की बात को देश, संविधान और मुस्लिम विरोधी बताने की कोशिश कर रहे थे, लेकिन अमित शाह ने जवाब में साफ कहाकि हम जिस समस्या का समाधान करते हैं, उसी पर पूरा ध्यान लगाते हैं और इसीलिए पड़ोसी मुस्लिम देशों में धार्मिक प्रताड़ना के आधार पर हर अल्पसंख्यक को भारत का नागरिक बनाने वाला विधेयक पेश किया. गृहमंत्री अमित शाह ने लगे हाथों कांग्रेस सहित विपक्षी दलों की इस बात को भी रेखांकित किया कि उन्होंने सिर्फ मुसलमानो को चिन्हित किया. महात्मा गांधी के हवाले से गृहमंत्री ने स्पष्ट किया कि गांधी जी भी कहते थे कि हिन्दू और सिखों को धार्मिक आधार पर प्रताड़ना झेलनी पड़ रही है. तीन तलाक, अनुच्छेद 370 और अब नागरिकता संशोधन विधेयक को लाकर और उसे सफलतापूर्वक लागू करके नरेंद्र मोदी सरकार और उसमें खासकर अमित शाह राष्ट्रीय विचारों के नेता के तौर पर जनता में पहले से भी ज्यादा भरोसा जमाने में कामयाब रहे हैं और सबसे बड़ी बात यह रही कि इसमें विपक्षी पार्टियों ने ही नरेंद्र मोदी और अमित शाह की बड़ी मदद की. कांग्रेस सहित सभी विपक्षी पार्टियां भले ही संविधान, देश की बात कहती रहीं, लेकिन इसके तुरन्त बाद विपक्ष ने जोर-जोर से मोदी-शाह और भाजपा को हिन्दुओं के लिए हर काम करने वाली और मुस्लिम विरोधी पार्टी के तौर पर स्थापित करने की कोशिश की और विपक्ष की इस कोशिश का ही प्रभाव रहा कि जनता दल यूनाइटेड जैसी पार्टी अनुच्छेद 370 का विरोध करने के बाद जनभावना के आधार पर दोनों सदनों में नागरिकता संशोधन विधेयक के साथ खड़ी हो गयी. कई लोग तो मजाक में नवीन पटनायक की बीजू जनता दल को नई शिवसेना बताने लगे हैं. शाहकार का शाब्दिक अर्थ होता है नायाब कलाकृति, लेकिन अनुच्छेद 370 हटाने के बाद जिस खूबसूरती से देश के गृहमंत्री अमित शाह ने नागरिकता संशोधन विधेयक पारित कराया है, इसे शानदार राजनीति कृति के तौर पर याद किया जाएगा. इसे ऐसे देखा जाएगा कि राजनीतिक जोखिम लेने के साथ ही नरेंद्र मोदी और अमित शाह ने पहला मौका मिलते ही अपनी वैचारिक प्रतिबद्धता को साबित किया है, इससे उन्हें मत देने वाले मतदाताओं में और भरोसा जगेगा. कुल मिलाकर नागरिकता संशोधन विधेयक एक और अमित शाहकार है, जिसे भारतीय राजनीति में हमेशा इस तरह से याद रखा जाएगा कि इससे वैचारिक प्रतिबद्ध नेता के तौर पर अमित शाह की पहचान पुख्ता हुई है.

(लेखक वरिष्ठ स्तंभकार हैं. लेख में व्यक्त उनके विचार निजी हैं.)

नागरिकता कानून: राजनीतिक इतिहास का महत्वपूर्ण बिंदु

अभिनव प्रकाश

यह एक ऐतिहासिक क्षण था जब नागरिकता संशोधन विधेयक (2019) संसद द्वारा पारित किया गया. संसद में एक सार्थक एवं तथ्यपूर्ण चर्चा के उपरांत नागरिकता संशोधन विधेयक, 2019 पारित हुआ. 12 दिसंबर 2019 को इस विधेयक को राष्ट्रपति ने अपनी मंजूरी दी और भारत के आधिकारिक राजपत्र में प्रकाशित होने के साथ ही अब यह अधिनियम (कानून) बन गया है. यह अधिनियम अफगानिस्तान, पाकिस्तान और बांग्लादेश से 31 दिसंबर, 2014 से पहले भारत में आए गैर-मुस्लिमों को भारतीय नागरिकता प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा. इन तीनों देशों (जो घोषित रूप से इस्लामिक देश हैं) में धार्मिक रूप से प्रताड़ित होने वाले हिंदू, सिख, ईसाई, बौद्ध, जैन और पारसियों को अब वापस इन देशों में नहीं भेजा जाएगा और उन्हें भारत की नागरिकता दी जाएगी.

इस अधिनियम के प्रभाव में आने के साथ ही लियाकत-नेहरू समझौते की विफलता के बाद लंबे समय से पड़ोसी देशों में धार्मिक रूप से प्रताड़ित अल्पसंख्यकों की रक्षा की मांग भी पूरी हुई है. यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि यह मांग राम मंदिर, अनुच्छेद 370 को निरस्त करने की मांग या समान नागरिक संहिता की मांग से भी पुरानी थी. 1950 में डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने नेहरू लियाकत समझौते के विरोध में नेहरू के मंत्रीमंडल से इस्तीफ़ा दिया था. उन्होंने तर्क दिया कि यह समझौता पाकिस्तान के गैर-मुस्लिमों को उनके हाल पर छोड़ देने की बात करता है और पाकिस्तान पर आश्रित है, लेकिन पाकिस्तान अपने यहाँ अल्पसंख्यकों की चिंता नहीं करता है.

पाकिस्तान और बांग्लादेश से धार्मिक उत्पीड़न की वजह से पलायन कर रहे अल्पसंख्यकों को शरण देने और उन्हें नागरिकता देने की मांग जनसंघ के समय से होती चली आ रही है. इन अल्पसंख्यकों को नागरिकता दिए जाने की मांग को भाजपा ने अपने 2014 और 2019 के घोषणापत्रों में भी प्रमुखता से रखा था. शत्रुतापूर्ण रवैये वाले विपक्ष के विरोध के बावजूद भाजपा ने अपने चुनावी घोषणापत्र के एक और वादे को पूरा किया है.

यह क़ानून मानवीय गरिमा को बहाल करते हुए जरूरतमंद व्यक्ति को बेहतर जीवन प्रदान करता है. यह महत्वपूर्ण इसलिए भी है क्योंकि यह उन धार्मिक अल्पसंख्यकों की पहचान करता है जिनके समर्थन में एक भी आवाज नहीं उठाई गई. बहुत लंबे समय तक उनके साथ अनाथों की तरह व्यवहार किया गया. उन्हें अमानवीय भेदभाव, बहिष्कार, जबरन धर्मांतरण जैसी यातनाएं दी गईं. इसलिए यह क़ानून मानवतावाद के लिहाज से बेहद महत्वपूर्ण है.

यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि अधिकांश हिंदू शरणार्थी दलित और अन्य शोषित जातियों से हैं, जो विभाजन के दौरान पलायन करने में असमर्थ थे या उन्हें

इस्लामिक गणराज्य पाकिस्तान में नौकर दर्जे के छोटे कामों के लिए जबर्दस्ती बंदी बनाकर रखा गया और उन्हें भारत आने की अनुमति नहीं थी, लेकिन अब उन सभी शरणार्थियों को भारतीय गणतंत्र का नागरिक बनकर एक उम्मीद की किरण नजर आती है. यह प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी की इच्छाशक्ति और गृहमंत्री श्री अमित शाह की प्रतिबद्धता थी जिसने इसे संभव बनाया.

नए अधिनियम का विरोध मुख्यतः दो बातों को लेकर हो रहा है. पहला, यह मुसलमानो के साथ भेदभाव करता है और दूसरा, यह भारत के नार्थ-ईस्ट राज्यों की जनसांख्यिकी को खतरे में डालता है. मुसलमानो से भेदभाव का आरोप वही विपक्षी दल लगा रहे हैं, जिन्होंने बहुत पहले ही भारत-अमेरिका परमाणु समझौते तक को मुस्लिम विरोधी करार दिया था. उनका मुख्य तर्क यह है कि यह संशोधन पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफगानिस्तान के मुसलमानो के साथ भेदभाव करता है और यह संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करता है, लेकिन, अनुच्छेद 14 का अर्थ सभी के साथ समान व्यवहार करना है, धार्मिक, जाति, लिंग आदि के स्तर पर किसी के साथ भेदभाव किए बगैर.

यह अधिनियम इन तीन देशों से आने वाले किसी भी विदेशी मुस्लिम को भारत का नागरिक बनने से नहीं रोकता है. अंतर केवल इतना है कि नागरिकता की मांग करने वाले व्यक्ति को उचित मानक प्रक्रियाओं का पालन करना होगा. इसलिए, देश के धर्मनिरपेक्ष ताने-बाने के साथ भेदभाव और इसके उल्लंघन का तर्क एकदम निराधार है.

यह अधिनियम केवल तीन आधिकारिक इस्लामी देशों के धार्मिक अल्पसंख्यकों पर केंद्रित है. यहां तक कि दुनिया के अन्य देशों के हिन्दुओं को भी मुसलमानो के समान तय प्रक्रियाओं का पालन करना होगा, तभी उन्हें भारत की नागरिकता प्राप्त होगी. इस बात पर सवाल उठाए गए हैं कि उत्पीड़ित मुस्लिम संप्रदाय जैसे अहमदी, शिया या अन्य जैसे बलूच आदि को शामिल क्यों नहीं किया गया है? लेकिन यह अधिनियम केवल धार्मिक अल्पसंख्यकों के लिए है, बलूच या हज़ारा जैसी जातियों के लिए नहीं. यह धार्मिक उत्पीड़न के शिकार लोगों के लिए है, न कि राजनीतिक रूप से संघर्ष कर रहे लोगों के लिए. अहमदियों को भारत द्वारा अल्पसंख्यक नहीं माना गया है और इस्लाम के अंदर धार्मिक या साम्प्रदायिक विरोधाभास से भारत का दूर रहना ही अच्छा है. अधिनियम के खिलाफ विपक्ष की ऐसी सभी आपत्तियाँ खोखली हैं और यह सिर्फ विरोध के लिए विरोध करने जैसी बात है.

नार्थ-ईस्ट के लोगों की एकमात्र वैध चिंता यह है कि इस अधिनियम से स्थानीय जनसांख्यिकी बदल सकती है. इन चिंताओं को दूर करने के लिए अरुणाचल प्रदेश, नागालैंड और मिजोरम को अधिनियम से बाहर रखा गया है और मणिपुर को इनर लाइन परमिट के माध्यम से संरक्षित किया गया है. असम, मेघालय और त्रिपुरा में 6वीं अनुसूची के अंतर्गत आने वाले क्षेत्रों को भी बिल के दायरे से बाहर रखा गया है. इससे आने वाले शरणार्थी भारत के अनेक हिस्सों में जाकर निवास कर सकेंगे. जैसा कि विभाजन के दौरान तिब्बतियों और शरणार्थियों के साथ किया गया था. यह उत्तर-पूर्व के सीमावर्ती राज्यों पर जनसांख्यिकीय बोझ को कम करेगा, क्योंकि यहीं सबसे ज्यादा अप्रवासी बांग्लादेश से आते हैं.

नया अधिनियम भारत के राजनीतिक इतिहास में भी एक महत्वपूर्ण बिंदु है क्योंकि यह पहली बार है जब भारत अंतर्राष्ट्रीय मंच पर हिन्दुओं के अधिकारों के लिए खड़ा हुआ है. इसी के साथ ही हमने दुनियाभर में सताए गए धार्मिक अल्पसंख्यकों को सुरक्षित स्थान प्रदान करने की अपनी सभ्यता और परंपरा को पुनः प्रमाणित किया है.

(लेखक दिल्ली विश्वविद्यालय में असिस्टेंट प्रोफेसर हैं. लेख में व्यक्त उनके विचार निजी हैं.)

नागरिकता कानून : खुलने लगी झूठ की परतें

शिवानंद द्विवेदी

जर्मनी के नाजी नेता और हिटलर के करीबी गोयबल्स का कहना था कि एक झूठ को सौ बार बोलो तो वह सच लगने लगेगा. दुनिया में सूचना क्रांति का विकास जिस गति से हुआ, गोयबल्स की यह 'थ्योरी' भी खूब आजमाई गई. आश्चर्य की बात है कि भारत में 'गोयबल्स थ्योरी' का उसके मूल विचारों का धुर-विरोध करने वाले कथित प्रगतिशील बुद्धिजीवियों ने ही अपने आचरण में बहुधा प्रयोग किया. संसद के बीते सत्र में नागरिकता (संशोधन) कानून-2019 पारित हुआ. राष्ट्रपति की मुहर के बाद यह कानून अमल में आ गया है. किंतु इस कानून को लेकर गलत सूचनाओं का एक ऐसा अनवरत सिलसिला चलाया गया, जिसने छात्र आंदोलन के बहाने हिंसा और उपद्रव की शक्ल ले ली.

वैसे तो नागरिकता कानून के प्रावधान अत्यंत स्पष्ट हैं और इसको लेकर अनेक बार बताया जा चुका है कि इससे भारत में किसी भी धर्म के किसी व्यक्ति की नागरिकता प्रभावित नहीं होती है. यह विशुद्ध रूप से भारत की सीमा से सटे तीन ऐसे देशों, जो इस्लाम को अपने राज्य का मजहब घोषित कर चुके हैं, से धार्मिक प्रताड़ना की वजह से 31 दिसंबर 2014 तक भारत आए वहां के अल्पसंख्यकों हिंदू, सिख, बौद्ध, जैन, पारसी और ईसाई धर्मावलंबियों को नागरिकता देने के लिए बना कानून है. इसमें आसानी से समझ आने वाली बात है कि यह कानून एक विशेष परिस्थिति में नागरिकता देने का जरूर है, लेकिन किसी भी हालत में यह कानून भारत में रहने वाले किसी धर्म के किसी भी व्यक्ति की नागरिकता पर असर डालने वाला नहीं है.

आसान शब्दों में समझे जाने वाले इस विषय को लेकर देश में ऐसी भ्रामक स्थिति का पैदा होना, चकित करता है. किंचित संदेह नहीं कि नागरिकता संशोधन कानून पर विरोध राजनीति प्रायोजित है. संसद में जब इस कानून पर चर्चा हो रही थी तब कांग्रेस सहित अन्य विरोधी दलों ने अनुच्छेद-14 के उल्लंघन के आधार पर इस कानून को 'विधि के समक्ष समता से या विधियों के समान संरक्षण

मूल रूप में देखें तो नागरिकता कानून को लेकर कांग्रेस सहित इस कानून से असहमत दल दो सवाल उठा रहे हैं. पहला यह कि यह संशोधन सिर्फ पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफगानिस्तान के लिए क्यों. दूसरा सवाल यह कि यह कानून धार्मिक भेदभाव करता है. इन्हीं दो सवालों के इर्द-गिर्द देश में भ्रामक वातावरण तैयार करने का प्रयास इन राजनीतिक दलों द्वारा किया जा रहा है और यह साबित किया जा रहा है कि यह कानून मुस्लिम-विरोधी है.

से वंचित करने वाला' बताकर असंवैधानिक सिद्ध करने का प्रयास किया. किंतु चर्चा में यह बात टिक नहीं सकी. यहां तक कि अनेक कानूनविदों ने भी इसे अनुच्छेद-14 का उल्लंघन मानने से इनकार कर दिया.सीधी सी बात है कि अगर भारत के अंदर किसी खास वर्ग के लिए विशेष प्रावधान किए जाने से अनुच्छेद-14 का उल्लंघन नहीं होता है तो इस कानून से भी उल्लंघन होने का कोई प्रश्न नहीं खड़ा होता है. लिहाजा इस आधार पर इस कानून का विरोध तर्कहीन है. 'रिजनेबल क्लासिफिकेशन' की छूट अनुच्छेद-14 में मिली हुई है और इसके तहत अनेक वर्गों को विशेष प्रावधानों का लाभ संविधान सम्मत व्यवस्था में मिल रहा है. इसके बाद देश की सर्वोच्च निर्वाचित पंचायत संसद से पारित इस कानून पर रोक लगाने को लेकर 59 याचिकाएं सुप्रीम कोर्ट में डाली गईं, किंतु अदालत ने भी पर इस पर रोक लगाने से मना कर दिया.सही नहीं कानून की संवैधानिकता पर सवाल

नागरिकता संशोधन कानून की संवैधानिकता पर सवाल उठाने वाली कांग्रेस अपने अतीत के कदमों को या तो भूल रही है, अथवा भूलने का ढोंग कर रही है. नागरिकता का यह कानून वर्ष 1955 में कांग्रेस शासन के दौर में ही बना और समय-समय पर अनेक संशोधनों से होते हुए आज यहां तक पहुंचा है. वर्ष 2003 में इसी कानून में संशोधनों के आधार पर पाकिस्तान और बांग्लादेश से आने वाले हिंदू और सिख शरणार्थियों को गुजरात और राजस्थान के कुछ जिलों में नागरिकता देने का प्रावधान किया गया था. राजस्थान की चर्चा करते हुए नहीं भूलना चाहिए कि 2009 में खुद राजस्थान के मुख्यमंत्री अशोक गहलोत ने तत्कालीन गृहमंत्री पी चिदंबरम को पत्र लिखकर हिंदू और सिख शरणार्थियों को नागरिकता देने का विषय उठाया था.

धार्मिक भेदभाव का आधार बता बनाया गया

आज कानून में संशोधन लाकर तीन देशों के धार्मिक प्रताड़ना के शिकार छह अल्पसंख्यक समुदायों को नागरिकता देने का बीड़ा मोदी सरकार ने उठाया है. यह भारतीय जनता पार्टी के इतर लगभग सभी दलों के नेताओं की उस दौर में चिंता रही है. आज भले ही कम्युनिस्ट पार्टी इस कानून का विरोध कर रही है, किंतु 12 फरवरी 1964 को भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के नेता एच एन मुखर्जी ने लोकसभा में कहा था, 'पाकिस्तान में हिंदुओं के खिलाफ बातें की जा रही हैं, जो लोग आ रहे हैं और पहले आ चुके हैं उन्हें शरणार्थी कहा जाता है. वे शरणार्थी नहीं हैं. यह देश उनका घर होना चाहिए.'

भ्रामक माहौल

मूल रूप में देखें तो नागरिकता कानून को लेकर कांग्रेस सहित इस कानून से असहमत दल दो सवाल उठा रहे हैं. पहला यह कि यह संशोधन सिर्फ पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफगानिस्तान के लिए क्यों. दूसरा सवाल यह कि यह कानून धार्मिक भेदभाव करता है. इन्हीं दो सवालों के इर्द-गिर्द देश में भ्रामक वातावरण तैयार करने का प्रयास इन राजनीतिक दलों द्वारा किया जा रहा है और यह साबित किया जा रहा है कि यह कानून मुस्लिम-विरोधी है.

भारत के नागरिक पर लागू नहीं

बात दूसरे सवाल की करें तो कहा जा रहा है कि इस कानून से मुसलमानो को बाहर क्यों रखा गया है? पहली बात जो देश के हर नागरिक को स्पष्ट होनी चाहिए कि यह कानून भारत के किसी भी नागरिक पर लागू नहीं होता, लिहाजा भारत के मुसलमानो पर भी इसका असर नहीं पड़ेगा. मूल सवाल यह कि जब सीमावर्ती तीन देशों के हिंदुओं, सिखों, बौद्धों, जैनियों, पारसियों और ईसाईयों

पर यह कानून लागू किया गया है तो वहां के मुसलमानो से क्या समस्या है? आदर्शवाद के कल्पनालोक में यह सवाल निश्चित तौर पर हर उस व्यक्ति को आकर्षित कर सकता है जो इसे सिर्फ एक मामूली सवाल मानकर जवाब तलाश रहा हो, किंतु इस सवाल की तहें इतनी सपाट नहीं हैं जितनी सरसरी नजर से देखने पर दिखती हैं. इतिहास और परिस्थिति के आधार पर इस सवाल का धरातल न ही समतल है और न ही सरलीकृत. यह सवाल सात दशक पहले हुए एक राजनीतिक, सामाजिक और भौगोलिक उथल-पुथल की कोख से निकला है.

पाक-बांग्लादेश में घटती हिंदू आबादी

भारत में मुसलमानो की बढ़ी जनसंख्या और पाकिस्तान तथा बांग्लादेश में वहां के अल्पसंख्यकों की जनसंख्या के गिरते हुए आंकड़े बताते हैं कि भारत ने तो अपने वादे को निभाया, किंतु पाकिस्तान की तरफ से नेहरू-लियाकत समझौते की पूरी तरह से अनदेखी की गई. यह स्वीकारने में कोई गुरेज नहीं कि वह समझौता पाकिस्तान में रह गए अल्पसंख्यक हिंदुओं और सिखों के साथ एक छलावा साबित हुआ. समाजवादी नेता राममनोहर लोहिया ने भी इस संबंध में चिंता जताते हुए लोकसभा में कहा था कि 'नेहरू-लियाकत समझौते में अल्पसंख्यकों की सुरक्षा का वादा किया गया था, लेकिन फिर भी पाकिस्तान में उनके साथ अत्याचार हो रहा है.'

आज कानून में संशोधन लाकर तीन देशों के धार्मिक प्रताड़ना के शिकार छह अल्पसंख्यक समुदायों को नागरिकता देने का बीड़ा मोदी सरकार ने उठाया है. यह भारतीय जनता पार्टी के इतर लगभग सभी दलों के नेताओं की उस दौर में चिंता रही है. आज भले ही कम्युनिस्ट पार्टी इस कानून का विरोध कर रही है, किंतु 12 फरवरी 1964 को भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के नेता एच एन मुखर्जी ने लोकसभा में कहा था, 'पाकिस्तान में हिंदुओं के खिलाफ बातें की जा रही हैं, जो लोग आ रहे हैं और पहले आ चुके हैं उन्हें शरणार्थी कहा जाता है. वे शरणार्थी नहीं हैं. यह देश उनका घर होना चाहिए.'

मनमोहन सिंह उठा चुके हैं मामला

इतना ही नहीं, वर्ष 2003 में खुद डॉ. मनमोहन सिंह ने विपक्ष में रहते हुए पाकिस्तान और बांग्लादेश के अल्पसंख्यकों को नागरिकता देने का मुद्दा राज्यसभा में उठाया था. वर्ष 2005 में संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार के तत्कालीन विदेश राज्यमंत्री ई अहमद ने, उसके बाद वर्ष 2007 में उसी सरकार के विदेश राज्यमंत्री श्रीप्रकाश जायसवाल ने, और फिर वर्ष 2010 में लोकसभा में विदेश मंत्री एस एम कृष्णा ने इस मामले को सदन में उठाया था. इसके बाद वर्ष 2012 में कांग्रेस शासित राज्य असम के तत्कालीन मुख्यमंत्री तरुण गोगोई पड़ोसी देश में धार्मिक आधार पर उत्पीड़न का मुद्दा उठा चुके हैं.

आज जब एक ऐसी समस्या के समाधान का रास्ता मोदी सरकार कानूनी आधार पर निकाल रही है तो कांग्रेस सहित अन्य दलों द्वारा भ्रम का वातावरण तैयार करके

नागरिकता संशोधन कानून की संवैधानिकता पर सवाल उठाने वाली कांग्रेस अपने अतीत के कदमों को या तो भूल रही है, अथवा भूलने का ढोंग कर रही है. नागरिकता का यह कानून वर्ष 1955 में कांग्रेस शासन के दौर में ही बना और समय-समय पर अनेक संशोधनों से होते हुए आज यहां तक पहुंचा है. वर्ष 2003 में इसी कानून में संशोधनों के आधार पर पाकिस्तान और बांग्लादेश से आने वाले हिंदू और सिख शरणार्थियों को गुजरात और राजस्थान के कुछ जिलों में नागरिकता देने का प्रावधान किया गया था.

देश के अंदर अस्थिरता की स्थिति पैदा करना उचित नहीं है. इतिहास के तथ्य इस बात के गवाह हैं कि जो निर्णय आज मोदी सरकार ने पाकिस्तान, बांग्लादेश तथा अफगानिस्तान के धार्मिक रूप से प्रताड़ित अल्पसंख्यकों के मानवाधिकारों के लिए लिया है, वह किसी भी भारतीय नागरिक का अहित नहीं करता है तथा इसका समर्थन किसी न किसी दौर में लगभग सभी प्रमुख दलों ने किया है.

नागरिकता के संदर्भ में समयानुकूल बदलाव को समझने की दरकार

नागरिकता संशोधन कानून जैसे विषय पर चर्चा करते हुए हम गृहमंत्री अमित शाह द्वारा कही गई 'रिजनेबल क्लासिफिकेशन' की बात की अनदेखी नहीं कर सकते हैं. 'रिजनेबल क्लासिफिकेशन' की चर्चा के क्रम में हमें पहले से चले आ रहे नागरिकता कानून में ओवरसीज नागरिकों के लिए तय कुछ प्राविधानों को देखना होगा. इस कानून के अनुसार नागरिकता के संबंध में जो प्रावधान लागू किए गए हैं, वो पाकिस्तान और बांग्लादेश के व्यक्तियों पर लागू नहीं होते हैं. अब सवाल यह है कि जब बाकी देशों के व्यक्तियों के लिए नागरिकता का प्रावधान किया गया तो पाकिस्तान और बांग्लादेश को क्यों इससे बाहर रखा गया था? इसके पीछे भी कारण 'रिजनेबल क्लासिफिकेशन' का ही समझ में आता है.

किंतु आश्चर्यजनक है कि वर्ष 2005 के संशोधन में खुद 'रिजनेबल क्लासिफिकेशन' के आधार पर पाकिस्तान और बांग्लादेश को अलग रखने वाले प्राविधानों को बरकरार रखने वाली कांग्रेस वर्तमान में इन देशों में रहने वाले प्रताड़ित अल्पसंख्यकों की नागरिकता के लिए लाए गए कानून का विरोध कर रही है. कहने की आवश्यकता नहीं कि यह कांग्रेस के दोहरे चरित्र का द्योतक है. हमें बिना किसी भ्रम में रहे यह समझना होगा कि समय और परिस्थिति के हिसाब से अलग-अलग समय पर सरकारों ने नागरिकता कानून में जरूरत के अनुरूप बदलाव किया है. पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफगानिस्तान में रहने वाले वहां के अल्पसंख्यर्क हिंदू, सिख, ईसाई, बौद्ध, जैन और पारसी समुदाय के लोगों को इसी 'रिजनेबल क्लासिफिकेशन' के तहत भारत की नागरिकता देने की बात की जा रही है.

कोरा भ्रम साबित हुआ जिन्ना का कथन

देश की आजादी के बाद तत्कालीन कांग्रेस पार्टी ने जिस देश विभाजन को स्वीकार किया, उसका आधार मजहबी था. दरअसल यहां 'मजहबी' शब्द का प्रयोग इसलिए करना पड़ रहा है, क्योंकि पाकिस्तान की मांग करने वालों में प्रमुख मोहम्मद अली जिन्ना का कथन, 'पाकिस्तान एक सेक्युलर, लोकतांत्रिक और आधुनिक राज्य होगा,' कोरा भ्रम साबित हुआ. पूर्व प्रधानमंत्री इंद्र कुमार गुजराल भी इसे 'अल्पकालिक भ्रम' बता चुके हैं. दरअसल बंटवारे के बाद भारत एक 'पंथ-निरपेक्ष' लोकतांत्रिक गणराज्य के रूप में आगे बढ़ा, जबकि पाकिस्तान ने कुछ ही वर्षों में अपने राज्य का पंथ 'इस्लाम' को घोषित कर दिया.

चूंकि विभाजन की त्रासदी के बावजूद भारत में बड़ी संख्या में मुसलमान रह गए थे और पाकिस्तान में भी गैर-मुस्लिम बड़ी संख्या में रह गए थे. अत: उनकी चिंता तत्कालीन दौर के महात्मा गांधी सहित लगभग सभी दलों के भारतीय नेताओं को थी. आजादी के तुरंत बाद के वर्षों में कांग्रेस ने अपने प्रस्ताव में पाकिस्तान के 'गैर-मुस्लिमों' की स्थिति पर चिंता जताई थी. तत्कालीन परिस्थिति के आलोक में ही नेहरू-लियाकत समझौता हुआ था और दोनों देशों द्वारा अपने सीमा क्षेत्र के अल्पसंख्यक हितों की रक्षा का वादा संकल्प के रूप में व्यक्त किया गया.

(सीनियर रिसर्च, फेलो, डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी रिसर्च फाउंडेशन)

नागरिकता संशोधन कानून: संवैधानिकता की कसौटी पर खरा

आयुष आनंद

नागरिकता संशोधन अधिनियम 2019 को लेकर हम सबने देश में एक भ्रामक माहौल तैयार करने की कोशिश देखी है. एक ऐसा माहौल जहाँ यह कहा जा रहा है कि यह कानून मुस्लिमों से भेदभाव करता है और संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है तथा इस कानून को NRC के साथ लागू करके केंद्र सरकार देश के मुस्लिम नागरिकों को डिटेंशन सेंटर में डालना चाहती है एवं उनकी नागरिकता छीन लेना चाहती है. तमाम प्रदर्शनकारियों, भारत में सक्रिय विभिन्न इस्लामिक अतिवादी संगठन, संगठित विपक्ष एवं वाम बुद्धि जीवियों के खेमे और उनके समस्त शिष्यों के अनुसार इस कानून का उद्देश्य मुस्लिमों से भेदभाव करना तथा उन्हें दरकिनार करके नागरिक अधिकारों से वंचित कर देना है और इसलिए यह राष्ट्र की धर्मनिरपेक्षता के आधार पर चोट है, तथा इस हेतु ऐसे तमाम लोग संविधान को बचाने की लड़ाई के नाम पर हर तरह की अराजकता एवं इस कानून के विरुद्ध फैलाई जा रही अफवाहों को मूक समर्थन दे रहे हैं.

यथार्थ में इन लोगों को इस नए कानून का उद्देश्य क्या है उसे ठीक से समझने की जरुरत है. समझने की जरुरत संविधान को भी है और हिन्दू-मुस्लिम की संकीर्ण मानसिकता से जब हम मुक्त होकर इस कानून के उद्देश्य एवं लक्षित समूहों को इमानदारी से देखेंगे तो यह विवाद स्वतः ही समाप्त हो जायेगा क्योंकि इस कानून का ना तो भारत के मुसलमानो से कोई लेना देना है और ना ही यह इस्लाम के अनुयायियों से केवल इस्लाम के आधार पर भेदभाव करता है. इस लेख में संविधान के अनुच्छेद 14 के दूसरे भाग, जिसका प्रस्तुत प्रकरण में हमने लगभग नगण्य उल्लेख देखा है, उस पर भी प्रकाश डाला जायेगा जो की कानून के नजर में हर व्यक्ति से समानता के साथ-साथ कानून के द्वारा हर व्यक्ति को समान संरक्षण की भी बात करता है. समान संरक्षण का यही सिद्धांत भारत में लागू विभिन्न वर्ग विशेष के हितों को ध्यान में रखकर बने कानूनों का आधार है, जो गुण विशेष के आधार पर कमजोरों एवं हाशिये पर पड़े वर्ग विशेष को अन्य व्यक्तियों की तुलना में विशेष संरक्षण देकर उन्हें बाकियों के समकक्ष बनाने की कोशिश करता है.

भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अपने अन्यान्य फैसलों में ऐसे वर्गीकरण को सही ठहराया गया है, अगर वह तर्कसंगत हो और किसी एक विशेष लक्ष्य की पूर्ति हेतु आवश्यक हो या राज्य को ऐसा लगे की किसी वर्ग विशेष की समस्या का समाधान इसी तरीके से हो सकता है तो वह अनुच्छेद 14 के अंतर्गत वैध ही नहीं अपितु समानता के सिद्धांतों के अनुरूप भी होगा. जैसे हम मछली और घोड़े की दौड़ केवल जमीन पर या केवल पानी में नहीं करवा सकते उसके लिए मछली को जल में और घोड़े को जमीन

भारत के सर्वोच्य न्यायालय द्वारा अपने अन्यान्य फैसलों में ऐसे वर्गीकरण को सही ठहराया गया है, अगर वह तर्कसंगत हो और किसी एक विशेष लक्ष्य की पूर्ति हेतु आवश्यक हो या राज्य को ऐसा लगे की किसी वर्ग विशेष की समस्या का समाधान इसी तरीके से हो सकता है तो वह अनुच्छेद 14 के अंतर्गत वैध ही नहीं अपितु समानता के सिद्धांतों के अनुरूप भी होगा.

पर दौड़ना होगा. ठीक उसी तरह इन तीन देशों से भारत में आये और रह रहे धार्मिक अल्पसंख्यक शरणार्थी जो कि धार्मिक कारणों से प्रताड़ित और विस्थापित हैं की तुलना इन्हीं तीन देशों से भारत में दाखिल हुए वहाँ की बहुसंख्यक आबादी, जिन्होंने घुसपैठ की हो, और जिनसे राष्ट्र की सुरक्षा प्रभावित हो सकती है, से करना बेमानी होगी. भारत में पड़ोसी के इन तीन देशों से आ रहे या आ चुके विस्थापितों का मुख्य रूप से यह दो समूह है. यह दोनों समूह काफी भिन्न हैं, इन दोनों समूहों के विस्थापन का कारण भिन्न हैं अतएव सुरक्षा और राष्ट्रीय हितों के मद्देनजर दोनों को नागरिकता देने की कसौटी कभी समान नहीं हो सकती है. पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफगानिस्तान से आये और बिना नागरिकता के रह रहे ऐसे धार्मिक अल्पसंख्यकों के समूह से पिछले 70 सालों में भारत की संस्कृति, संविधान, सुरक्षा एवं लोकतंत्र पर कभी कोई आंच नहीं आई, वरन यह समूह भारत के लिए आर्थिक दृष्टिकोण से वरदान ही साबित हुआ है. परन्तु क्या हम इन तीन देशों से अवैध तरीके से भारत में दाखिल हुए वहाँ के बहुसंख्यकों के बारे में ऐसा बोल सकते हैं क्या ? जिस समूह विशेष ने अपने धर्म के आधार पर भारत का विभाजन करवाया और वहाँ रहने चले गए उस वर्ग विशेष का भारत में अचानक घुसपैठ का क्या उद्देश्य हो सकता है? अगर इन तीन देशों के बहुसंख्यकों को भी निर्बाध नागरिकता दे दी जाय तो फिर आखिर विभाजन का उद्देश्य क्या था?

CAA, 2019 के लक्षित समूह और इनकी भारतीय नागरिकता हेतु वहाँ की बहुसंख्यक आबादी से भिन्न पात्रता:

यह एक सर्वविदित सत्य है कि पड़ोस के तीन मुस्लिम बहुल देशों में धार्मिक अल्पसंख्यकों की संख्या धीरे-धीरे शून्य होती जा रही है. धार्मिक अल्पसंख्यकों को वहाँ कट्टरपंथी इस्लामिक ताकतों से अपने जान-माल और आबरू की रक्षा करने हेतु रातों रात अपना सब कुछ छोड़कर भारत आना पड़ता है. विभाजन पश्चात, धार्मिक प्रताड़ना के कारण सीमापार से भारत में पलायन का शुरू हुआ सिलसिला काफी लम्बे समय तक चलता रहा और आज भी अक्सर ऐसे घटनाक्रमों से हम रूबरू होते रहते हैं. काफी बड़ी तादाद में, आज़ादी के बाद से ही भारत इन सबके लिए एक सांस्कृतिक राष्ट्र की भांति ऐसे विस्थापितों एवं प्रताड़ितों की शरणस्थली रहा है. प्रताड़ित शरणार्थियों का यह समूह कभी भी राष्ट्रीय सुरक्षा एवं हितों के लिए खतरा नहीं रहा है और ना ही हो सकता है, वरन ये तो पहले हमारे ही भारत का हिस्सा थे और न ही इनके नए देश में अब इन्हें कोई पूछने वाला है. इस नए नागरिकता संशोधन अधिनियम का उद्देश्य केवल इस समूह के कष्टों का निवारण है जो कि भारत के द्वारा इस समूह को विभाजन के समय दिया गया वादा भी था. किसी एक समूह का कष्ट निवारण किसी दूसरे समूह के साथ भेदभाव नहीं माना जा सकता. दोनों समूहों के लिए भारत में नागरिकता पाने हेतु प्रावधान मौजूद हैं लेकिन ये भिन्न हैं, और यह विभेद संवैधानिक रूप से तर्कसंगत और न्यायसंगत है.

भारत भूमि तो इनके लिए समान सांस्कृतिक विरासत

वाली वह जगह थी जैसे 'स्वतंत्र राष्ट्र' की अपेक्षा इनके पूर्वजों ने की थी. स्वतंत्रता संग्राम में भारत की आजादी के लिए अंग्रेजों के खिलाफ इनके पूर्वजों ने भी हम भारतवासियों की भांति बराबरी का योगदान दिया था. इस प्रताड़ित समूह या इनके पूर्वजों ने पकिस्तान या इस्लामिक राष्ट्र के निर्माण हेतु अंग्रेजों से संघर्ष नहीं किया था. ऐसे देश में वो कभी जाना ही नहीं चाहते थे कि जहाँ उनकी माँ-बेटियों की इज्ज़त केवल इसलिए असुरक्षित हो जाये क्योंकि वो मुसलमान नहीं हैं, आये दिन उन्हें धर्म परिवर्तन का दवाब झेलना पड़ता है, ना मानने पर उनकी संस्थागत हत्या तक हो जाती है. इस समूह का नैसर्गिक राष्ट्र तो भारत ही बनता था, चूँकि नया देश जो भारत को बाँट कर बना था, और जहाँ ये लोग दुर्भाग्य से रह गए थे, वह देश तो मुस्लिम जनसँख्या और इस्लामिक राष्ट्र की संकल्पना को साकार करने हेतु बना था. वहाँ गैर मुस्लिमों का भविष्य तो कुछ था ही नहीं और ठीक वैसा ही हुआ जैसा डॉ श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने 'नेहरु-लियाकत' समझौते के विरोध में इस्तीफा देते समय कहा था.

नेहरु लियाकत समझौता: भारत और पाकिस्तान के द्वारा एक दूसरे के देश में बच गए धार्मिक अल्पसंख्यकों को दिया गया वादा

भारत ने पाकिस्तान में बच गए धार्मिक अल्पसंख्यकों को इस समझौते के आधार पर एक अप्रत्यक्ष वादा किया था कि अगर पाकिस्तान आपकी देखभाल नहीं करेगा तो भारत आपकी जिम्मेदारी उठाएगा. इस समझौते के आधार पर पंडित नेहरु ने फैसला किया था कि मुस्लिमों को उनके धर्म के हिसाब से अलग देश तो दिया गया है लेकिन गैर मुस्लिमों को भी वहीँ रहना चाहिए क्योंकि पाकिस्तान के प्रधानमंत्री लियाकत अली ने उन्हें वादा किया है कि पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तान में गैर मुस्लिमों का भी भविष्य सुरक्षित रहेगा. इसी वादे के हिसाब से पंडित जी ने जनसँख्या अदला-बदली के मांग को दरकिनार कर दिया और वहाँ फस गयी गैर मुस्लिम आबादी जिसे भारत ने अपने संविधान की स्वीकृति के बाद अपनाने से और उन्हें नागरिकता देने के प्रावधानों में रियायत देने से इनकार कर दिया. भारत ने अपने यहाँ बचे धार्मिक अल्पसंख्यकों से किया वादा तो निभाया, परन्तु पडोसी मुल्क के अल्पसंख्यकों से किया वादा हम भूल गए. हमारे यहाँ मुस्लिम जनसँख्या अनुपात बढ़ा ही है परन्तु पकिस्तान के हालात धार्मिक अल्पसंख्यकों के लिए कभी सामान्य नहीं हुए. वहाँ धीरे-धीरे अल्पसंख्यकों की आबादी लगभग ख़त्म होने के कगार पर है. ये बिलकुल ऐसा ही है कि जैसे मां ने अपने बदनसीब बेबस बेटों को भूला दिया हो, उन्हें उनके हाल पर मरने छोड़ दिया हो.

अब प्रश्न उठता है कि नेहरु लियाकत समझौते के विफल होने कि स्थिति में जिम्मेदार कौन है, कौन इन धार्मिक अल्पसंख्यकों से किये गए वादे को निभाएगा. पकिस्तान तथा बांग्लादेश में बच गए अल्पसंख्यकों, आजादी और वहाँ के संविधान बन जाने के बाद भी वहाँ से भगा दिया गया यह समूह जो भारत में बिना नागरिकता के सालों से रह रहा है अपनी समस्या के समाधान के लिए किसकी ओर देखे? क्या वामपंथियों और प्रगतिशील विचारधारा वालों के पास इनकी समस्या का कोई समाधान है? ये तो वापस भी अपने नए मुस्लिम बहुल देश नहीं जा सकते क्योंकि वहाँ इनकी अब न कोई संपत्ति बची है और न ही सुरक्षित जीवन जीने की संभावना.

भारत, नेहरु लियाकत समझौते के विफल होने की स्थिति में ऐसे अल्पसंख्यकों को विशेष संरक्षण और नागरिकता देने हेतु प्रतिबद्ध है. यही कारण है कि संविधान के अनुच्छेद 11 में भारत की संसद को नागरिकता सम्बंधित कानून बनाने की छुट भविष्य की अनिश्चितता को देखते हुए दी गयी थी. इस नागरिकता संशोधन अधिनियम का एक

उद्गम यह समझौता भी है जो कि 8 अप्रैल 1950 को हुआ था. इस संशोधन को लाने में 70 सालों का यह विलंब न ही न्यायसंगत है और न ही तर्कसंगत. संघर्ष काल में हुए ऐसे समझौते संविधान और कानून को अपने हिसाब से ढालने की शक्ति रखते हैं. जब महात्मा गाँधी और अम्बेडकर जी के मध्य पूना पैक्ट हुआ और भीम राव अम्बेडकर ने दलितों के लिए अलग निर्वाचन सूची की मांग छोड़ी तो वह इस वादे पर हुआ कि भारत में दलितों एवं जनजातियों (SC/ST) के लिए विधायिका में आबादी के हिसाब से आरक्षण रहेगा. जिस भावना को हम अपने संविधान के अनुच्छेद 330 में देखते हैं. ठीक उसी तरह नेहरु लियाकत समझौते के आलोक में अनुच्छेद 11 के तहत प्रदत्त अधिकारों के अंतर्गत संसद के द्वारा लाया गया यह संशोधन धार्मिक अल्पसंख्यकों से विभाजन के समय किये गए वादे की पूर्ति मात्र है और यह कहीं से भी गलत नहीं है. यह संशोधन एक वर्ग विशेष को नागरिकता अधिकार देने मात्र का है, और इसमें कहीं भी किसी की नागरिकता समाप्त करने का कोई प्रावधान नहीं है.

संवैधानिकता के कसौटी पर खरा उतरेगा CAA 2019:

किसी भी कानून के संविधान सम्मत होने या नहीं होने की विवेचना का अधिकार केवल संवैधानिक न्यायालयों को है. नागरिकता के प्रावधानों में इस नए संशोधन की संवैधानिकता फ़िलहाल माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विचाराधीन है. इसलिए इस मुद्दे पर सड़कों पर उतरकर प्रदर्शन करना तथा इस तरह का व्यापक तोड़ फोड़ एक तरह से न्यायिक प्रक्रिया में बाधा ही माना जायेगा तथा इसे अगर सर्वोच्च न्यायालय पर दवाब बनाने की कोशिश कहा जाय तो यह अतिश्योक्ति नहीं होगी.

यह संशोधन अधिनियम अगर तर्कसंगत वर्गीकरण की श्रेणी में आता है और अगर इन नवीन प्रावधानों के कारण कानून अपने उद्देश्य एवं लक्ष्यों की पूर्ति में सक्षम है तो यह कानून समानता के सिद्धांतों के अनुरूप यानी की अनुच्छेद 14 की परीक्षा पास कर लेगा. इस मुद्दे पर अगर हम सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा पहले के दिए गए फैसलों पर नज़र डालें तो यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो जाएगी.

सर्वोच्च न्यायालय के सात जजों की संविधान पीठ ने ***बुधन चौधरी एवं अन्य बनाम बिहार राज्य,*** AIR 1955 SC 191 के केस में यह नियम दिया है कि अनुच्छेद 14 तर्कसंगत वर्गीकरण को नहीं रोकता है अगर यह वर्गीकरण विवेक के साथ समूहों के मध्य आसानी से पहचान में आने वाली अंतरों (भेदों) के कारण किया गया हो (intelligable differentia) जो कि वर्ग विशेष को बाकी श्रेणियों से भिन्न करता हो तथा अगर इस वर्गीकरण का आधार और कानून के वस्तुनिष्ठ उद्देश्यों की पूर्ति में तार्किक सम्बन्ध और जुड़ाव (reasonable nexus) हो.

राम कृष्ण डालमिया केस, AIR 1958 SC 538 के पैरा 11 में भी सर्वोच्च न्यायालय ने इसी उपरोक्त

SCC 228 के पैरा 9 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने वर्गीकरण के तौर तरीकों को विधायिका के कार्य क्षेत्र की बात बताते हुए हस्तक्षेप से इनकार किया था अगर वर्गीकरण किसी भी तार्किक आधार पर किया गया हो. अर्थात यह सरकार पर निर्भर है कि वह किस वर्ग विशेष की समस्या पर ध्यान दे और ऐसा करते वक्त यह जरुरी नहीं कि वह किसी दूसरे वर्ग और समस्याओं का निदान भी उसी में करे. यह बात 'डिग्री ऑफ़ हार्म' (Degree of Harm) के बहुत पुराने और स्थापित सिद्धांत पर आधारित है.

सिद्धांत को सही बताते हुए विस्तारपूर्वक चर्चा की है. यह संशोधन तभी गलत साबित हो सकता है अगर यह कानून 'arbitrary' यानि की मनमाना या एकपक्षीय साबित हो जाये. ***रोपय्या बनाम तमिलनाडु राज्य,*** (1974) 4 SCC 3 के केस में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने 'Arbitrary' शब्द की व्याख्या देते हुए कहा है कि इसका मतलब होता है बिना किसी तार्किक आधार के. इसी व्याख्या को अभी हाल के ही सर्वोच्च न्यायालय के संविधान पीठ ने ***पुत्तास्वामी केस,*** (2019) 1 SCC 1 के पैरा 378 में स्वीकार किया है. वर्तमान विवाद में विपक्षी भी इसे अतार्किक नहीं बता रहे हैं और न ही इस तरह के वर्गीकरण को अतार्किक कहा जा सकता है जब कि हमारा संविधान खुद भाषाई और धार्मिक अल्पसंख्यक नागरिकों को विशेष अधिकार देता है. ***उत्तर प्रदेश राज्य बनाम कौशल्या एवं अन्य, AIR 1964 SC 416,*** के पैरा 7 और ***बिनोय विश्वम बनाम भारत संघ एवं अन्य, AIR 2017 SC 2967,*** के पैरा 96 में भी माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इन्हीं बातों को दोहराया है.

वर्तमान संशोधन अधिनियम इन तीन देशों के धार्मिक अल्पसंख्यकों को वहाँ के बहुसंख्यकों से एक अलग समूह मानता है जो की प्रताड़ना के कारण भारत आने पर विवश हुए हैं एवं इस विशेष समूह को नागरिकता देने के प्रावधानों में विशेष रियायत देता है. यहाँ पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफगानिस्तान को भारत के साथ ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के कारण चुना गया है जिसे अंग्रेजों ने आज़ादी दी तथा यह हमारे वो तीन पड़ोसी देश हैं जो मुस्लिम बहुसंख्यक हैं और वहाँ धार्मिक अल्पसंख्यकों पर लगातार अत्याचार हुआ है और उन्होंने भारत में शरण ली है. इस संशोधन का उद्देश्य मुस्लिम बहुसंख्यक पड़ोसी मुल्कों से भगाए और सताए धार्मिक अल्पसंख्यकों को नागरिकता देने का है. अतएव यह वर्गीकरण जिसमें तीन देशों को चुना गया है और जहाँ के मुस्लिमों को इसमें समाहित नहीं किया गया है वो नैसर्गिक है एवं इस कानून के लक्ष्य की पूर्ति के लिए आवश्यक है. भूटान, श्रीलंका और म्यांमार जैसे देशों को क्यों छोड़ा गया ऐसी बातें करने वालों को समझना चाहिए कि यह कानून बाकी किसी देश की समस्या को ध्यान में रखकर नहीं बनाया गया है और ना ही वर्तमान ऐसी कोई मांग या आवश्यकता हमने महसूस की है. अगर वहाँ भी ऐसी समस्या आएगी तो उसके लिए सरकार अलग कानून बना सकती है. पड़ोस के तीन मुस्लिम बहुसंख्यक देशों के धार्मिक अल्पसंख्यकों की समस्या से जो भारत जूझ रहा है उसकी तुलना अन्य पड़ोसी देशों से तो बिलकुल ही नहीं किया जा सकता और ऐसी कोई भी कोशिश कुतर्क ही कही जा सकती है.

कुमारी चित्रा घोष बनाम भारत संघ, (1969) 2 SCC 228 के पैरा 9 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने वर्गीकरण के तौर तरीकों को विधायिका के कार्य क्षेत्र की बात बताते हुए हस्तक्षेप से इनकार किया था अगर वर्गीकरण किसी भी तार्किक आधार पर किया गया हो. अर्थात यह सरकार पर निर्भर है की वह किस वर्ग विशेष की समस्या पर ध्यान दे और ऐसा करते वक्त यह जरुरी नहीं कि वह किसी दूसरे वर्ग और समस्याओं का निदान भी उसी में करे. यह बात 'डिग्री ऑफ़ हार्म' (Degree of Harm) के बहुत पुराने और स्थापित सिद्धांत पर आधारित है.

माखन लाल मल्होत्रा बनाम भारत संघ, (1961) 2 SCR 120 का केस पाकिस्तान से आये शहरी और ग्रामीण विस्थापितों का है जिसमें सरकार ने दोनों प्रकार के विस्थापितों के लिए दो विभिन्न नियम बनाये थे. सर्वोच्च न्यायालय ने पैरा 15 में इस दोनों समूह के वर्गीकरण को सही ठहराया था, तो आज धार्मिक अल्पसंख्यकों को संरक्षण देने हेतु धार्मिक आधार पर वर्गीकरण गलत कैसे

हो जायेगा.

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने धार्मिक आधार पर वर्गीकरण को भी अपने विभिन्न फैसलों में सही ठहराया है. ***महंत मोती दास बनाम एस पी शाही, AIR 1959 SC 942*** के केस में चूँकि सिखों के धार्मिक ट्रस्ट को हिन्दुओं और जैनों के धार्मिक ट्रस्ट की अपेक्षा विशेष संरक्षण की आवश्यकता विधायिका ने महसूस नहीं किया जो की तार्किक वर्गीकरण पर आधारित था को न्यायालय ने सही ठहराया. केवल धर्म के आधार पर वर्गीकरण अमान्य होगा परन्तु अगर धर्म के साथ कुछ और जुड़ता हो जैसे की धार्मिक रीती रिवाजों का ज्ञान तो ऐसा वर्गीकरण क़ानूनी रूप से मान्य होता है. ***जैयान्तिया हिल्स डिस्ट्रिक्ट कौंसिल केस,*** (2006) 4 SCC 748 के केस में डोल्लोई के पद पर चुनाव लड़ने के लिए ईसाईयों को बाहर रखा गया था जिसे कोर्ट ने सही ठहराया क्योंकि यह केवल धर्म के आधार पर नहीं अपितु डोल्लोई के पद को चलने हेतु ईसाईयों की रीति और रिवाज़ में करने हेतु असमर्थता के कारण थी. इसी भांति मुस्लिमों को CAA 2019 से बाहार रखने का आधार केवल उनका धर्म नहीं है अपितु मुस्लिमों के धार्मिक रूप से इन तीन देशों में प्रताड़ित नहीं होने के कारण है चूँकि वो वहाँ बहुसंख्यक हैं.

विदेशी नागरिकों के दो समूह के लिए अलग अलग कानूनी व्यवस्था को सर्वोच्च न्यायालय काफी पहले सही ठहरा चुका है. ***हांस मुलर ऑफ़ नुरेनबर्ग केस,*** (1955) 1 SCR 1284 के पैरा 23 से 26 में विदेशी नागरिकों के विभिन्न समूहों के लिए किये गए वर्गीकरण को तर्कसंगत बताया जा चुका है. अतएव CAA 2019 की संवैधानिकता पर कोई प्रश्न चिन्ह नहीं है. यह बात इस प्रावधान के खिलाफ प्रदर्शन कर रहे बुद्धिजीवियों को काफी पहले समझ आ चुकी है और यही कारण है कि अब इस मुद्दे को NRC से जोड़ कर एक भ्रामक माहौल बनाया जा रहा है.

CAA + NRC:

संभवतः हमारी दृष्टि में यह एक ऐसा अनूठा विरोध प्रदर्शन है जहाँ एक एक ऐसे कानून का विरोध किया जा रहा है जो अभी सरकार की परिकल्पना में भी नहीं आया है. विरोध यह है की NRC के नियमों से जिसमें तरह तरह के कागजात दिखाने पड़ेंगे और नहीं दिखने पर आप नागरिकता से बेदखल हो जायेंगे. यह बात सरासर झूठ है, ऐसे किसी नियमों की घोषणा अभी तक नहीं हुई है. यह भ्रम असम में सर्वोच्च न्यायालय के अधीन चल रहे NRC की प्रक्रिया को मान लेना कि पूरे भारत में यही लागू होगा, इस कारण है. आसाम NRC के नियम शेष भारत में लागू होंगे, ऐसा किसने कहा और किसने कहीं सरकारी कागजातों में ऐसा पढ़ा है यह कोई नहीं बता रहा. अगर गृहमंत्री ने कहा पुरे देश में NRC लागू होगा तो इसका यह मतलब कैसे हो गया की असम वाला ही लागू होगा. असम की स्थिति असम एकॉर्ड 1985 और नागरिकता कानून में असम के लिए विशेष प्रावधान (धारा 4A) के कारण पूर्ण रूप से भिन्न है. नागरिकता नियमावली, 2003 के नियम 18 के अंतर्गत अभी तक केंद्र सरकार ने कोई नियम शेष भारत के लिए बनाया ही नहीं है और ना ही इसकी कोई रुपरेखा तैयार की गयी है. CAA का विरोध इस डर के कारण कि NRC में जरुरी कागजात लोगों के पास नहीं होंगे, इसलिए खोखला है क्योंकि वो यथार्थ पर अवस्थित नहीं है. NRC का विरोध जिसे जायज़ लगे वो करे लेकिन उस हेतु CAA को असंवैधानिक बोलना बचपना और अवैध बांग्लादेशी मुस्लिम घुसपैठियों को अपने राजनैतिक स्वार्थ हेतु वोट की लालच में शह देने के अलावा कुछ भी नहीं है.

(रिसर्च एसोसिएट, डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी रिसर्च फाउंडेशन)

आंदोलन के नाम पर चल रहा राजनीतिक षड्यंत्र

आशीष कुमार 'अंशु'

सीएए के खिलाफ चल रहे उपद्रवियों के दंगा-फसाद के बीच पिछले दिनों एनडीटीवी को लेकर एक कार्टून काफी चर्चित हुआ. इस कार्टून में उपद्रवी एनडीटीवी की ओवी वैन जला रहे हैं और चैनल का कैमरामैन उन्हें समझा रहा है- "सर हम तो एनडीटीवी वाले हैं."

यह कार्टून इसलिए भी चर्चित हुआ क्योंकि एनडीटीवी लगातार उपद्रवियों के पक्ष में अभियान चला रहा था. जब यह कार्टून सामने आया तो लोगों ने उसे सही परिप्रेक्ष्य में समझा. एनडीटीवी का दंगों को बढावा देने का रिकॉर्ड वैसे भी पुराना है. गुजरात 2002 के समय भी इस चैनल की एक स्टार रिपोर्टर दंगाइयों को ग्राउंड जीरो से रिपोर्ट करते हुए बताती रही कि यह सूरत का सोना-चांदी मार्केट है. यहां पुलिस की कोई खास व्यवस्था नहीं है. मानो वह उपद्रवियों को बाजार लूटने के लिए आमंत्रित कर रहीं हो.

सीएए के खिलाफ आंदोलन में इस बार एनडीटीवी के एक एंकर का मोबाइल नंबर उपद्रवियों के बीच बांटा गया. सोशल मीडिया पर वायरल हुए संदेश में बताया गया कि किसी भी प्रकार की कठिनाई होने की स्थिति में इस एंकर को फोन किया जा सकता है. इस चैनल ने कट्टर इस्लाम और आतंक को समर्थन देने वाली केरल की दो मुस्लिम लड़कियों को नायिका बनाकर भारतीय समाज के सामने पेश करने में भी कोई कसर नहीं छोड़ी. ऐसी लड़कियों को रोल मॉडल बनाकर पेश करने के पीछे चैनल का मकसद क्या हिंसा भड़काना था? इसका जवाब हमें कभी नहीं मिलेगा!

दोष सिर्फ एक चैनल को क्यों देना? जबकि कई सारे पत्रकार, अखबार, वेब साइट, चैनल इस काम में लगे थे. वास्तव में नागरिकता संशोधन से जुड़े जिस विधेयक को लेकर देशभर के मुसलमानो को उकसाया गया, जब यह आलेख मैं लिख रहा हूं उस वक्त तक वह विधेयक, कानून बन चुका है. नागरिकता के जिस प्रश्नों को नागरिकता कानून सुलझाता है, उससे भारतीय मुसलमानो का कोई ताल्लुक नहीं. फिर हमें समझना होगा कि देशभर के मुसलमानो का यह विरोध सिर्फ शक्ति प्रदर्शन है?

वर्तमान में सीएए पर चल रहे प्रदर्शन को समझने में शाह बानो प्रकरण पर महाराष्ट्र के प्रबोधन मंच पर आरिफ मोहम्मद खान के वक्तव्य से सहारा मिला. प्रबोधन मंच पर बात करते हुए श्री खान कहते हैं- उस समय की सरकार के पास 400 से अधिक सांसद थे. इतना बड़ा बहुमत भारतीय संसदीय इतिहास में कभी किसी प्रधानमंत्री के पास नहीं था. उस वक्त भारतीय मुसलमानो के नेताओं द्वारा हिंसक भाषा का इस्तेमाल किया जा रहा था. भाषा इतनी हिंसक थी कि पर्सनल लॉ बोर्ड के समर्थक एक सांसद का भाषण संसद में इतना आपत्तिजनक हो गया था कि उनके भाषण से चार

जगह शब्दों को हटाना पड़ा. यह भारतीय संसदीय इतिहास में पहली बार हुआ कि भारत सरकार के किसी मंत्री ने सुप्रीम कोर्ट के जजों के लिए अत्यंत अपमानजनक शब्दों का प्रयोग किया हो. उन चार वाक्यों को स्पीकर साहब को कार्रवाई से हटाना पड़ा.

शाहबानो प्रकरण आज तीन दशक के बाद इसलिए उल्लेखनीय हो गया है क्योंकि लंबे समय के बाद देश में फिर एक बार बहुमत की सरकार है. लंबे समय के बाद देश को एक ऐसा नेतृत्व मिला है, जिसपर एक मत से पूरे देश ने विश्वास किया है और एक स्थायी मजबूत सरकार के खिलाफ एक बार फिर देशभर में मुसलमान सड़क पर हैं.

सीएए के विरोध प्रदर्शन में शामिल मुसलमानो को तथ्यों से कुछ लेना-देना नहीं है. जैसे शाहबानो प्रकरण में भी मुसलमानो को इस बात से कोई मतलब नहीं था कि सर्वोच्च न्यायालय का फैसला क्या था? उन्हें किसी तरह यह बात समझा दी गई है कि यह कानून मुसलमानो के खिलाफ है. यही बात शाहबानो प्रकरण में भी समझाई गई थी. किसी मुसलमान को मस्जिद और मदरसों में हुई तकरीर के बाद ना एनआरसी पर कोर्ट के फैसले से कोई मतलब रह गया था और ना ही किसी को इस बात से कुछ लेना देना था कि सीएए का कानून इस पर क्या कहता है?

किसी भी देश को अपने कानून, संविधान द्वारा निर्धारित मान्यताओं के आधार पर ही चलना चाहिए. ऐसे में देश के मुसलमान समुदाय का समय-समय पर अपनी शक्ति का प्रदर्शन करना और किसी असंवैधानिक जिद पर अड़ जाना और सरकार को अपने हक में फैसला लेने के लिए विवश करना न्यायोचित तो नहीं कहा जा सकता.

एक ऐसे नैरेटिव के दम पर जो झूठ की बुनियाद पर गढ़ी गई है, लाखों मुसलमानो को सड़क पर ले आने के फरेब की वजह को समझने के लिए हमे सच्चर समिति की रिपोर्ट को पढ़ना होगा. नवम्बर 2006 में आई सच्चर समिति की रिपोर्ट के बाद भी मुसलमानो के बीच अशिक्षा कैसे खत्म हो इस पर कांग्रेस सरकार ने कभी काम नहीं किया, क्योंकि अशिक्षित मुसलमान उलेमा, मुफ्तियों के साथ-साथ कांग्रेस, सपा, राजद जैसे राजनीतिक दलों के लिए भी उपयोगी थे. यदि सीएए के पक्ष में खड़ी भीड़ का चेहरा पहचानना चाहते हैं तो संसद में 80 के दशक में शाहबानो बेगम को लेकर हुई जिरह आपको अवश्य पढ़नी चाहिए. उसके बाद आप सच्चर समिति की पूरी रिपोर्ट पढ़ें. सारी तस्वीर साफ हो जाएगी.

बहकावे में लाकर सड़कों पर खड़ी कर दी गई लाखों मुस्लिम औरत-मर्द-बच्चों की भीड़ देखकर कोई द्रवित हो जाएगा. जामिया में प्रदर्शन में शामिल एक महिला की तस्वीर सोशल मीडिया में वायरल की जा रही है. ऐसी तस्वीरों को चाहे सहानुभूति इकट्ठा करने के लिए वामपंथी इस्तेमाल कर रहे हों, लेकिन छोटी बच्ची को जब सुरक्षा की जरूरत थी, उसे खुले आसमान के नीचे फोटो शूट के लिए लेकर आना मुर्खता ही कही जाएगी. यदि उस बच्ची को आंदोलन के दौरान ईश्वर ना करे कि कुछ हो जाए फिर क्या उसका दुख कोई वामपंथी एक्टिविस्ट आकर बांटेगा? वह एक परिवार का निजी दुख बनकर ही रह जाएगा.

इन मुर्खताओं पर विचार करते हुए इस पंक्ति पर नजर गई- "मदरसे आजादी के लिए खतरा हैं.'' यह मैं नहीं लिख रहा. इसे लिखा है- इस्लामिक स्कॉलर तुफैल अहमद ने.

एक बार पहले भी मैंने मदरसे के संबंध में इस तरह की बात देवबंद के हवाले से लिखी थी. मैंने लिखा था- देवबंद में जिहाद की गलत व्याख्या की जा रही है. उस वक्त फर्राह साकेब जैसे कट्टर मुसलमान युवक मदरसों के पक्ष में अजीब-अजीब तरह के तर्क ले आए थे. अब तो अच्छा है कि एक के बाद एक मुस्लिम समुदाय के लोग ही सामने से आकर मदरसे की हकीकत से पर्दा हटा रहे हैं, लेकिन

मदरसों के हक में बात करने वाले कहते हैं कि मदरसों में तो सिर्फ 04 फीसदी मुसलमान पढ़ रहा है बाकि मुसलमान बच्चे स्कूलों में जा ही रहे हैं.

इस प्रश्न का जवाब केरल के राज्यपाल और इस्लाम के जानकार आरिफ मोहम्मद खान के एक साक्षात्कार में मिलता है. जिसमें वे कहते हैं कि मदरसे में चाहे चार फीसदी बच्चे पढ़ते हों लेकिन ये चार फीसदी बच्चे ही पूरे देश में घूम-घूम कर मुसलमानो को इस्लाम समझाते हैं.

अब सवाल यह है कि यदि इनकी बुनियादी तालीम ही गलत होगी फिर वो तो पूरे देश में जाकर इस्लाम के नाम पर चरस के अलावा क्या बोएंगे?

मदरसा शिक्षा के संबंध में तुफैल अहमद लिखते हैं - "वह एक आजादी-विरोधी आंदोलन हैं, 21वीं सदी के स्वतंत्रता के विचारों के अनुरूप नहीं हैं. सेक्युलर हिंदू नेता (पॉलिटिकली करेक्ट) और इस्लामिक स्कॉलर धार्मिक स्वतंत्रता के नाम पर मदरसों का बचाव करते हैं, लेकिन भारतीय संविधान में धार्मिक अधिकार सभी मौलिक अधिकारों में सबसे निम्नतर और कमजोर अधिकार है. धार्मिक अधिकार के अनुच्छेद 25 में दो उपखंड हैं जो इस अधिकार को निम्नतर बनाते हैं:

'25 (1)- लोक व्यवस्था, नैतिकता और स्वास्थ्य के विषय में और इस भाग के अन्य उपबंधों के लिए (मौलिक अधिकारों से युक्त संविधान).

'25 (2)- इस अनुच्छेद की कोई भी बात किसी भी कानून के काम करने या राज्य को कोई भी कानून बनाने में प्रभावित नहीं करेगी.'

'मैं यह नहीं कह रहा हूं कि धार्मिक अधिकारों का अस्तित्व ही नहीं है. मेरा तर्क यह है कि धार्मिक अधिकार अन्य मौलिक अधिकारों से दबे हुए हैं. मैं समझाता हूं मेरे पास खाने का मौलिक अधिकार है, और मेरे पास सांस लेने का मौलिक अधिकार है, लेकिन मेरे सांस लेने का मौलिक अधिकार मेरे खाने और पीने के मौलिक अधिकारों पर भारी है. इसलिए धार्मिक अधिकार 18 वर्ष से पहले मौलिक अधिकार नहीं हो सकता है, अगर आप 18 वर्ष से पहले वोट नहीं दे सकते हैं, आपको 18 से पहले धर्म का मौलिक अधिकार नहीं मिल सकता है.''

खिलाफत 2.0

जामिया मिलिया इस्लामिया की तरफ देशभर के पत्रकारों की नजर 15 दिसम्बर को दिल्ली पुलिस की कार्यवाही के बाद गई. विश्वविद्यालय के छात्र नागरिक संशोधन कानून का विरोध कर रहे थे. इस विरोध में 15 दिसम्बर को जब जामिया के छात्रों की तरफ से नारा लगा- मेरा तुम्हारा रिश्ता क्या, या इलाहे लिल्लाह. इसी प्रदर्शन के दौरान जब जामिया के छात्रों ने दीवार पर लिखा- खिलाफत 2.0 तो यह सारी बातें उन लोगों को अपनी तरफ आकर्षित करने वाली थी जो मेरे तुम्हारे रिश्ते के बाद कहे गए या इलाहे लिल्लाह पर यकीन करते थे या फिर उन लोगों को खींच कर जामिया तक ले आई जो खिलाफत को समझते थे. जब इस मानसिकता के लोग आंदोलन में शामिल हो गए तो फिर इसे यूं भी छात्रों का आंदोलन नही रह जाना था. यह पूरी तरह से जामिया के छात्रों के हाथ से फिसल कर खिलाफत में यकीन करने वालों के हाथ में चला गया था.

जब जामिया में अफवाह का एक बड़ा तंत्र सक्रिय हो गया और वहां झूठी खबरों की बाढ़ सी आ गई. उसके बाद ऐसा लगा कि इसे नियंत्रित करना आसान नहीं होगा. उस वक्त तक यह भी साफ हो चुका था कि इस पूरे आंदोलन की पटकथा कोई और लिख रहा है. जिस पटकथा में जामिया के छात्र अपना-अपना किरदार निभा रहे हैं.

इस बात की तरफ किसी पत्रकार का ध्यान नहीं गया. 15 दिसम्बर को हुए प्रदर्शन का एक छोटा पूर्वाभ्यास जामिया के गेट नम्बर सात पर 13 दिसम्बर को किया गया था. जो खबर नहीं बनी. यह प्रदर्शन था जामिया एडमिनिस्ट्रेटिव

स्टाफ एसोसिएशन का. एसोसिएशन के महासचिव नसीम अहमद के हस्ताक्षर से जारी एक पत्र हमें प्राप्त हुआ है. इस पत्र में लिखा गया है, जामिया एडमिनिस्ट्रेटिव स्टाफ एसोसिएशन, एसआरके एसोसिएशन, जामिया स्कूल टीचर्स एसोसिएशन और जामिया टीचर्स एसोसिएशन नागरिक संशोधन कानून के विरोध में हैं. 13 दिसम्बर 2019 को दोपहर 02 बजे गेट नम्बर 07 पर जामिया के कर्मचारियों और जामिया बिरादरी में जो लोग खुद को शामिल मानते हैं उनसे निवेदन किया गया कि विरोध प्रदर्शन में शामिल हों.

14 दिसम्बर को दिल्ली में कांग्रेस की भारत बचाओ रैली थी और 15 को जामिया का प्रदर्शन उग्र हो उठा. 15 के बाद से जहां नागरिकता संशोधन कानून पर देशभर में नए सिरे से चर्चा होनी चाहिए थी, वहीं चर्चा के केन्द्र में जामिया के छात्र आ गए. देशभर में विमर्श का विषय नागरिकता के सवाल की जगह जेएनयू की राह पर चल पड़े जामिया के छात्र हो गया.

दिल्ली में दो महीने बाद विधानसभा के चुनाव होने हैं. मुसलमानो के वोट को आमतौर पर चुनावों में फसल की तरह देखा जाता है क्योंकि माना जाता है कि मुसलमानो का मत जहां भी जाएगा, एक मत से जाएगा. यह उनकी एकता और उनकी गतिविधियों के केन्द्र में नमाज और मस्जिद के अनिवार्य तत्व होने का परिणाम है. यदि मस्जिद और नमाज उनकी जिन्दगी में इतने महत्वपूर्ण तत्व नहीं होते तो कॉमरेड गीतकार जावेद अख्तर, कॉमरेड पत्रकार राणा अयूब से लेकर कॉमरेड छात्र नेता उमर खालीद तक को समय-समय पर यह बताने में हिन्दू कम्युनिस्टों की तरह थोड़ा संकोच होता कि वे मुसलमान हैं.

दिल्ली में कांग्रेस और आम आदमी पार्टी यह मान कर चल रहे हैं कि दिल्ली का मुसलमान बीजेपी की तरफ जाएगा नहीं. अब उसके सबसे बड़े हमदर्द बनकर ही उन्हें अपने पाले में शामिल किया जा सकता है. हमदर्द दिखने के लिए दर्द होना भी जरूरी है. इसलिए नागरिकता संशोधन कानून जैसी चिंगारी बैठे-बिठाए दोनों पार्टियों को मिल गई है. अब दोनों पार्टियां मिलकर इसे हवा देने का काम कर रहीं हैं.

झारखंड के बारहेट में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने इस तरफ इशारा करते हुए कांग्रेस को चुनौती देते हुए कहा भी - "कांग्रेस और उसके साथी, नागरिकता संशोधन कानून के मुद्दे पर मुसलमानो को भड़काने का, डराने का भयभीत करने का प्रयास करके अपनी राजनितिक खिचड़ी पकाना चाहते हैं. मैं कांग्रेस सहित उन तमाम दलों को खुली चुनौती देता हूं, अगर उनमें हिम्मत है, तो वो खुलकर घोषणा करें. कांग्रेस और उसके सारे साथी खुलकर घोषणा करे कि वो पाकिस्तान के हर नागरिक को भारत की नागरिकता देने को तैयार हैं.''

यह तो तय है कि इस तरह का बयान ना आम आदमी पार्टी देगी और ना यह चुनौती कांग्रेस स्वीकार करेगी. यह दोनों पार्टियां अपूर्वानंद जैसे प्राध्यापक, कॉलिन गोजाल्विस, अखिल गांधी जैसे वकील,फराह नकवी जैसी लेखिका, अमानतुल्लाह खान जैसे विधायक, मानवी और रवीश जैसे पत्रकारों का इस्तेमाल कर सकते हैं. जो अपनी निष्पक्षता जाहिर करने के लिए कभी कांग्रेस के पक्ष में नहीं बोलते. बल्कि इन सभी में यह बात सामान्य है कि सब बीजेपी के विरोध में अपनी पूरी ताकत लगाने को तैयार रहते हैं. इससे आप अनुमान लगा सकते हैं कि इनके काम करने की शैली कितनी रणनीतिक है और यह अपने कार्यशैली को लेकर कितने प्रतिबद्ध हैं.

सीएए को लेकर जामिया में 15 दिसम्बर को प्रदर्शन चल रहा था. किसी का ध्यान उनकी तरफ नहीं गया. शांतिपूर्ण प्रदर्शनों पर यूं भी इस देश में लोगों की नजर कम ही जाती है. इसलिए रक्षा का हमारा बजट बढ़ता जा रहा

है. अभी सौहार्द के बजट के संबंध में हमने विचार भी नहीं किया है जबकि सरकारों को शांतिपूर्ण प्रदर्शन करने वालों के साथ संवाद कैसे स्थापित हो, इसको लेकर गम्भीरता से विचार करना चाहिए. एबीवीपी के दिल्ली प्रदेश सचिव सिद्धार्थ यादव का यह सुझाव काबिले गौर है कि छात्र संगठनों को ऐसे मुद्दों पर अलग-अलग विश्वविद्यालय परिसरों में परिचर्चा आयोजित करनी चाहिए. श्री यादव ने जामिया के छात्रों को जामिया परिसर में सीएए पर बहस के लिए अपनी सहमति भी दी. छात्रों को भी लोकतांत्रिक और अहिंसक तरीके से ही अपने आंदोलन को आगे बढ़ाना चाहिए.

जामिया में ऐसा हो भी रहा था लेकिन शाम छह बजे जैसे ही गेट नंबर सात पर शाकिर अली के प्रदर्शन के दौरान पुलिस की गोली से मौत की अफवाह उड़ी, उसके बाद सारा आंदोलन हिंसक हो गया. कथित तौर पर कोटा के इस छात्र की तलाश भी किसी छात्र ने नहीं की. किस अस्पताल में है और कहां गोली लगी, यह तक जानने का किसी ने प्रयास नहीं किया. वास्तव में यही वह जाल था जिसमें जामिया के छात्र फंसे और फिर फंसते चले. अगले लगभग चौबीस घंटे जामिया में व्हाट्सएप विश्वविद्यालय से आ रही झूठी खबरों का ही राज रहा. एक समय तो जामिया में मरने वाले लड़को की संख्या छह तक चली गई. जिसे बाद में जामिया मिल्लिया इस्लामिया की पहली महिला कुलपति प्रो. नजमा अख्तर प्रेस कांफ्रेन्स करके स्पष्ट करना पड़ा कि एक भी बच्चे की मृत्यु नहीं हुई है.

उसके बाद फिर अफवाह तंत्र सक्रिय हुआ कि पुलिस ने गोली मारी है. एक छात्र को लगी है. वह खतरे से बाहर है. गोली चली थी और एक छात्र को लगी थी यह बात सच साबित हुई लेकिन वह गोली पुलिस की थी, यह बात झूठी साबित हो गई.

कुछ लोग यह माहौल बनाने में लगे हैं कि पूरे देश में छात्रों का प्रदर्शन चल रहा है, जबकि सच्चाई यह है कि जिन विश्वविद्यालयों में विरोध प्रदर्शन हो रहे हैं, उनमें एक भी ऐसा नहीं है जहां इस प्रदर्शन की अपेक्षा नहीं थी और अचानक छात्र विरोध का झंडा लेकर निकल आए हों. ये तो 2014 से ही बहाने ढूंढ़-ढूंढ़ कर प्रदर्शन कर रहे हैं क्योंकि इस प्रदर्शन में चाहे सामने से छात्र नजर आएं लेकिन पीछे पूरी ताकत से इनके शिक्षकों की वैचारिक राजनीति खड़ी होती है. जो जाधवपुर, जामिया और जेएनयू से मामले में साफ-साफ नजर आई. बहरहाल जिस देश में 900 विश्वविद्यालय हों, 40,000 कालेज, 11000 स्वतंत्र शैक्षणिक संस्थान, उस देश में यदि 22 संस्थानों में यदि कोई प्रदर्शन चल रहा हो तो उसे देशव्यापी नहीं कहा जा सकता.

जामिया में भड़की हिंसा से एक दिन पहले विश्वविद्यालय के ही छात्र इस आंदोलन के इस्लामीकरण में लग गए थे. कॉलेज की छात्रा लदीदा फरजाना जो अपने एक साथी को पुलिस के सामने आकर बचाती हुई एक वीडियो में नजर आती है. वह वीडियो बहुत वायरल हुआ. बाद में उनके ताल्लुकात बरखा दत्त से निकले. बरखा पहले से सीएए के विरोध में शामिल थी. इसलिए बरखा पर संदेह जताते हुए कई पोस्ट लिखे गए कि इस पूरे मामले की पटकथा लिखने वाली टीम में बरखा दत्त शामिल तो नहीं थी.

"कल हुए विरोध के दौरान यह हुआ. कुछ लिबरल ने हमें इंशा अल्लाह और अल्ला-हु-अकबर कहने से रोका. हम सिर्फ एक अल्लाह को मानते हैं. हम पहले ही आपके सेक्युलर स्लोगन को छोड़ चुके हैं.''

अब बताते चले कि लदीदा के ताल्लुकात 1992 में देश विरोधी गतिविधियों में लिप्त रहने की वजह से प्रतिबंधित इस्लामिक संगठन जमात ए इस्लामी से उसके ताल्लुकात रहे. लदीदा के पति शियस पेरुमथुरा इसी संगठन की एक इकाई एसआईओ - स्टूडेन्ट इस्लामिक आर्गेनाइजेशन के सेक्रेटरी हैं. जमात ए इस्लामी की स्थापना 1941 में हुई थी.

यह इस्लामिक राष्ट्र में यकीन रखने वाली पार्टी है. ये देश में शरिया कानून की वकालत करते हैं.

वैसे इस्लामिक राष्ट्रवाद और सेक्युलर स्लोगन छोड़ चुके हैं जैसी बातें देश के सेकुलर पत्रकारों के पल्ले नहीं पड़ी इसलिए वह बार-बार लिखते रहे कि जामिया में जो चल रहा है, वह छात्रों का संघर्ष है. एक सेकुलर पत्रकार ने अलीगढ़ विश्वविद्यालय में लगे "हिन्दुओं की कब्र खुदेगी, एएमयू की धरती पर.'' को सही ठहराते हुए कहा कि वहां हिन्दू नहीं हिंदुत्व की कब्र खोदने की बात कही गई थी क्योंकि उनकी वामपंथी व्याख्या में हिंदुत्व का अर्थ संघ का हिंदुत्व है. यह बेहद कमजोर तर्क था. ऐसे में मार भगाओ मुल्ला-काजी जैसे नारों को भी सही ठहराया जा सकता है क्योंकि मुल्ला-काजी का अर्थ आम भारतीय समाज कट्टर मुल्ला से लगाता है. क्या अब मिस्टर सेकुलर पत्रकार छात्रों को मार-भगाओ मुल्ला काजी कहने की इजाजत देंगे?

जामिया में हुई छात्रों द्वारा हिंसा के बाद फरहान अख्तर ने भी अब अपनी सेकुलर छवि को किनारे रखकर सोशल मीडिया पर मुसलमानो से अपील की है कि विरोध करने का समय खत्म हुआ. इसके बाद उन्होंने सड़क पर उतरने की तारीख की घोषणा कर दी है. 19 दिसम्बर को क्रांति मैदान मुम्बई में फरहान अख्तर अपने ट्वीट के साथ नागरिक संशोधन कानून और नेशनल रजिस्टर आफ सिटीजन से जुड़ी एक तस्वीर भी ट्वीट की है. फरहान अख्तर की तरह जावेद जाफरी ने भी 19 तारीख को क्रांति मैदान आने का अनुरोध किया.

फरहान अख्तर के अपील वाले ट्वीट पर आईपीएस अधिकारी संदीप मित्तल ने लिखा- "आपको यह भी जानने की आवश्यकता है कि आपने एक अपराध किया है. साथ में श्री मित्तल ने अख्तर से अनुरोध किया - "कृपया उस देश के लिए सोचिए जिसने आपको जीवन में सबकुछ दिया.''

चलते-चलते देश के सेकुलर पत्रकारों के लिए संयुक्त राष्ट्र से आई यह जानकारी साझा कर रहा हूं. संयुक्त राष्ट्र साफ शब्दों में कह रहा है कि पाकिस्तान में हिन्दुओं की, क्रिश्चियनों की धार्मिक स्वतंत्रता की स्थिति लगातार खराब होती जा रही है. पाकिस्तान में सिर्फ अहमदियों को छोड़कर बाकि सभी मुसलमानो का मजहब सुरक्षित है. संयुक्त राष्ट्र ही कह रहा है कि पाकिस्तान में क्रिश्चियन और हिन्दुओं की महिलाओं और बच्चियों को अगवा किया जा रहा है. उन्हें मुसलमान बनाया जा रहा है. तेरा-मेरा रिश्ता क्या कहने वाले क्या लानत भेजेंगे ऐसे मुल्क पर जहां अल्पसंख्यकों के पास धार्मिक आजादी तक नहीं है. एक अल्पसंख्यक के नाते उन्होंने दूसरे मुल्क के अल्पसंख्यकों का दर्द समझा होता तो सीएए का विरोध ना कर रहे होते. पाकिस्तान की इमरान सरकार ही कट्टरपंथियों के लव जिहाद को हवा दे रही है. एक बार लव जिहाद के अन्तर्गत निकाह होने के बाद रिपोर्ट कहती है- लड़कियों के परिवार के पास लौटने की उम्मीद बहुत कम ही रह जाती है. यूएन की कमीशन ऑन स्टेटस ऑफ वीमेन (सीएसडब्ल्यू) की रिपोर्ट कहती है, पाकिस्तान सरकार हिन्दुओं पर हमले के लिए कट्टरपंथी विचारों को बढ़ावा दे रही है. कमीशन ने 47 पन्नों की रिपोर्ट को 'पाकिस्तान: धार्मिक स्वतंत्रता पर हमला' नाम दिया है.

उम्मीद है कि पड़ोसी देश में रह रहे धार्मिक अल्पसंख्यकों के इस हाल को पढ़कर विरोध प्रदर्शन में शामिल कुछ मुस्लिम युवाओं, छात्रों और कट्टर मुल्लों का हृदय परिवर्तन होगा.

जामिया के हिंसक आंदोलन पर उठ रहे सवाल

जब यह बात दिल्ली के आम लोगों में होने लगी कि जामिया में जो कुछ हो रहा है उसकी पटकथा बाहर लिखी गई है तो यह बात बिल्कुल आधारहीन भी नहीं है. यह बात कही जा रही है तो कई ऐसे बिखरे हुए तार साफ-साफ लोगों को नजर आ रहे हैं, जो अंतिम में जाकर जामिया में हुई हिंसा से जुड़ जाते हैं-

- यदि जामिया का आंदोलन शांतिपूर्ण छात्र आंदोलन था तो वहां तेरा मेरा रिश्ता क्या, या इलाहे लिल्लाह, का नारा किसके लिए लगाया जा रहा था?
- वे कौन से छात्र थे जो खिलाफत 2.0 दीवारों पर लिखकर छात्रों के आंदोलन को विशुद्ध मुसलमानो का आंदोलन बना रहे थे.
- यदि आंदोलन में बाहरी मुसलमान या इलाहे लिल्लाह सुनकर दाखिल हो भी गए तो इन घुसपैठियों से खुद को अलग करने के लिए छात्रों ने क्या प्रयास किए?
- यदि खुद को अलग करना इन्हें सही नहीं लगा क्योंकि इनका ही यह आंदोलन था फिर आंदोलन में घुसपैठ कर रहे मुसलमानो की शिकायत उन्होंने दिल्ली पुलिस से क्यों नहीं की?
- यदि हिंसा करने वाले छात्रों के बीच पनाह ले रहे थे फिर दिल्ली पुलिस कैसे पहचान करेगी कि कौन पत्थरबाज है और कौन छात्र?
- आंदोलन में घुसपैठ कर रहे गुंडा एलीमेन्ट मुसलमानो से छात्रों ने दूरी क्यों नहीं बनाई?
- सीएए के खिलाफ भारत को बचाने की रैली दिल्ली में जाकिर हुसैन के ठीक सामने रामलीला मैदान में कांग्रेस 14 दिसम्बर को करती है और 15 को जामिया जल उठा.
- 15 को ही यह बात सामने आ गई कि जामिया के दंगाइयों के साथ आम आदमी पार्टी नेता और विधायक अमानतुल्ला खान दिखे. अमानतुल्ला ने सफाई दी - "मैं शाहीन बाग में हुए प्रदर्शन में था. मैं सरिता विहार जाने वाली रोड की तरफ था. यहां कोई हिंसा नहीं हुई." लेकिन उनसे जुड़े दो वीडियो वायरल हैं, पहली जिसमें वे दूर से नजर आ रहे हैं. जिसकी जांच होनी चाहिए कि वे दंगाइयों के साथ थे या नहीं. दूसरी वीडियो में वे मुसलमानो को भड़का रहे हैं- वे बता रहे हैं कि 47 से पहले सभी संसाधनों पर मुसलमानो का कब्जा था. वह सारे चले गए. मुसलमानो के साथ 48,000 फसाद हुए. एक में भी कार्रवाई नहीं हुई. सिक्खों के साथ एक फसाद हुआ 84 में. एक फसाद के अंदर एक्शन हुआ. आज भी सज्जन कुमार जेल में है."
- दिल्ली में दो महीने में चुनाव होने हैं. इस चुनाव को लेकर मुसलमानो के वोट को लुभाने में कांग्रेस और आम आदमी पार्टी दोनों लगी हुई हैं. यही चुनाव है जिसके लिए जामिया को आग में झोंकने में भी कांग्रेस और आम आदमी पार्टी संकोच नहीं कर रही है. यह समय है सौहार्द और शान्ति की बात करने का. इसकी जगह मुसलमानो को भड़का कर कांग्रेस और आप के नेता अपना उल्लू सीधा करने में लगे हैं.
- आम आदमी पार्टी के दिल्ली प्रदेश प्रभारी जसीम हैदर ने एक टीवी चैनल पर बताया कि किस तरह ओखला और जामिया नगर के आम लोग छात्रों के आंदोलन में घुस गए. मतलब जामिया में जो हुआ वह अचानक नहीं था. उसकी पटकथा पहले लिखी जा चुकी थी.
- नदवा कॉलेज, लखनऊ का सबसे बड़ा मदरसा है. जब देश की सेकुलर राजनीति सीएए के मुद्दे पर हिन्दू और मुसलमान के बीच खाई बढ़ाने की राजनीति में लगी है तो नदवा इससे कैसे बच सकता था. जामिया की अपील मेरा तुम्हारा रिश्ता क्या, नदवा के छात्रों को भी अपील कर गई. वहां भी विरोध प्रदर्शन जारी है. राहत की बात यह रही कि मुस्लिम छात्रों के बीच एक बड़ा तबका इस प्रदर्शन के साथ नहीं है. उसने खुद को इस पूरे प्रदर्शन से बाहर कर लिया है.

(लेखक युवा पत्रकार एवं मीडिया स्कैन के संस्थापक हैं)

वैचारिक प्रतिबद्धताओं को अमल में लाती मोदी सरकार

आदर्श तिवारी

नरेंद्र मोदी सरकार के दूसरे कार्यकाल में संसद किसी एक व्यक्ति पर केन्द्रित रही है, तो वह गृहमंत्री अमित शाह हैं. एनआईए संशोधन बिल से लेकर अनुच्छेद 370 हटाने तक का ऐतिहासिक निर्णय हो, गृहमंत्री ने अपने भाषण और अपनी कार्यशैली से अपने आलोचकों को भी प्रभावित किया है. संसद के शीत सत्र खत्म होने के ठीक पहले नागरिकता संशोधन विधेयक सदन में पारित हो गया. लोकसभा में तो इस विधेयक के पास होने पर कोई संशय नहीं था, किन्तु राज्यसभा में बिल पास होगा अथवा इस बार भी अटक के रह जाएगा, यह देखना दिलचस्प था, लेकिन तमाम संशय हवा में रह गए, सरकार की रणनीति इस बार भी राज्यसभा में सफल हुई और नागरिकता संशोधन विधेयक राज्यसभा में पास हो गया. सर्वविदित है कि यह विधेयक अपने पड़ोसी देश पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफगानिस्तान में धार्मिकता के आधार पर प्रताड़ित अल्पसंख्यको को भारत की नागरिकता प्रदान करके सम्मानयुक्त जीवन व्यतीत करने का अवसर प्रदान करेगा. दुर्भाग्य से विपक्ष एवं एक विशेष बौद्धिक कबीले द्वारा इस विधेयक को लेकर बहुत सारे भ्रम और गलत धारणाओं को विकसित करने का काम तेज़ी से हो रहा है. देश के एक समुदाय को यह बताया जा रहा है कि नागरिकता संशोधन विधेयक के आने से उनकी यहाँ की नागरिकता समाप्त हो जाएगी. यहाँ तक कि कुछ राजनेता अपनी खोखली दलील के कारण हास्य का भी पात्र बन रहे हैं. जिन्हें लग रहा है कि इस विधेयक के आने से बिहारी, पूर्वांचली, तेलगू सबकी नागरिकता खत्म हो सकती है. इस विधेयक पर गृहमंत्री अमित शाह ने एक-एक सवाल का जवाब तर्कपूर्ण ढंग से लोकसभा एवं राज्यसभा दोनों सदनों में दिया, किन्तु जिन्हें इस विधेयक में मानवीय पहलू से अधिक राजनीतिक नफा-नुकसान की चिंता है. वह इस विधेयक को लेकर तमाम प्रकार की भ्रांतियां खड़ी कर रहे हैं, कि यह विधेयक मुस्लिमों के खिलाफ़ है. सदन में गृहमंत्री ने बार-बार इस बात पर जोर देकर कहा कि इस विधेयक से हिंदुस्तान के मुसलमानो का कोई संबंध नहीं है. उन्होंने देश को आवश्वस्त भी किया कि मुस्लिमों को इससे डरने की कोई आवश्यकता नहीं है. इन सब के बावजूद विपक्ष इस विधेयक को मुस्लिम विरोधी बताने की दिशा में गैरवाजिब चिंगारी को हवा देने का काम कर रहा है. विपक्षी दलों के नेताओं के बयान एवं उनके वक्तव्यों से इस निर्णय पर पहुँचना आसान हो गया है. इनकी मंशा मुस्लिम समाज को भड़काने की है. बहरहाल, इस विधेयक की आवश्यकता क्यों थी इसको समझना आवश्यक है. इस विधेयक के आने से भारत में रहने वाले शरणार्थियों को सम्मान एवं गरिमायुक्त जीवन जीने का हक मिल सकेगा. इस विधेयक में प्रावधान किया

गया है कि अफगानिस्तान,बांग्लादेश और पाकिस्तान से आने वाले हिन्दू,जैन, बौद्ध, सिख, पारसी तथा इसाई जिन्हें धार्मिक रूप से प्रताड़ना मिली है और वह, उस प्रताड़ना से भयभीत होकर मुक्ति के लिए हिंदुस्तान आए हैं. उन्हें नागरिकता प्रदान की जाएगी, बशर्ते जो शरणार्थी 31 दिसंबर 2014 तक या उससे पहले भारत में आ चुके हों. चूंकि इन देशों में मुस्लिम बहुसंख्यक हैं, इसलिए इस सवाल का कोई तर्क नहीं है कि इसमें मुसलमानो को शामिल क्यों नहीं किया गया है. कुछ स्वयंभू बौद्धिक जमात के लोग पाकिस्तान में अहमदिया मुसलमानो का जिक्र कर रहे हैं, लेकिन सवाल यह है कि जब पाकिस्तान के अहमदिया मुसलमान इस्लाम में ही आस्था रखते हैं और उनका आपसी विवाद 'पैगंबर मोहम्मद' को आखिरी पैगम्बर ना मानना है. बौद्धिक जमात के इस तर्क के अनुसार विश्व में सऊदी अरब, सीरिया समेत कई इस्लामिक देशों में शिया-सुन्नी का आपसी टकराव जगजाहिर है. हैरत नहीं होनी चाहिए कि ये लोग उन देशों के नागरिकों को प्रताड़ित बताकर उनके लिए भारत की नागरिकता की भी मांग कर दें ! भारत के पड़ोसी देश पाकिस्तान, बांग्लादेश, अफगानिस्तान इस्लाम को मनाने वाले देश हैं और यहाँ हिन्दू अल्पसंख्यक हैं. यह कोई नई बात नहीं है. जिससे उन्हें हर तरह से प्रताड़ित होना पड़ता है, धार्मिक रूप से भेदभाव, अपने परिवार की सुरक्षा, महिलाओं की सुरक्षा, अपने आस्था का सम्मान, आस्था प्रतीकों को नष्ट करना ये सब क्रूर यातनायें हैं. जिन्हें इन देश की अल्पसंख्यक आबादी ने झेला है.

आंकड़े बताते हैं कि यह काम बहुत पहले ही हो जाना चाहिए था

यह बात किसी से छिपी हुई नहीं है कि विभाजन के बाद भारत में अल्पसंख्यकों की संख्या में बढ़ोत्तरी हुई, उसके ठीक उलट पाकिस्तान में अल्पसंख्यक को प्रताड़ना मिली. जिसके परिणामस्वरूप उनकी संख्या वहाँ तेज़ी से कम हुई. आंकड़ो पर गौर करें तो 1952 में पाकिस्तान में हिन्दुओं की आबादी 22 प्रतिशत थी, जो 2019 में घटकर महज़ 7-8 प्रतिशत रह गई. इसी तरह बांग्लादेश में 1974 में हिन्दुओं की जनसंख्या 13.5 प्रतिशत थी, जो 2011 में घटकर 8.5 प्रतिशत रह गई. इन अल्पसंख्यको के मानवाधिकार की रक्षा पर चुप्पी चारो तरफ दिखी. अंततः भारत सरकार ने उनके मानवाधिकार को सुरक्षित किया है.

जनसंघ के जमाने से जताई जा रही प्रतिबद्धता को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने पूरा किया

नरेंद्र मोदी सरकार के दूसरे कार्यकाल में पार्टी जनसंघ के जमाने से जो प्रतिबद्धता और वायदे करती आई है, उन वायदों को ऐतिहासिक ढंग से पूरा कर रही है. तीन तलाक, अनुच्छेद 370,राममन्दिर और अब नागरिकता संशोधन विधेयक के माध्यम से लंबे समय से लंबित एक और मुद्दे को संसद में पारित कराना सरकार की दृढ इच्छाशक्ति को दिखाता है. भारत के मतदाताओं को यह हर्ष प्रदान करता है कि पूर्ण बहुमत की सरकार चुनने एवं साहसिक नेतृत्व होने से लंबे कालखंड से उलझे हुए मुद्दे भी सुलझ सकते हैं. नरेंद्र मोदी और अमित शाह की जोड़ी ने अपने साहसिक निर्णयों से देश की जनता के बीच अपनी विश्वसनीयता को और मजबूत किया है. जनसंघ से लेकर अभी तक पार्टी जिन वायदों को जनता के बीच घोषणापत्रों के माध्यम से ले जाती है. उन वायदों को एक-एक करके नरेंद्र मोदी सरकार पूरा कर रही है. यहाँ जनसंघ के जमाने से लेकर अभी तक पार्टी द्वारा पारित कुछ प्रस्तावों और घोषणापत्रों का जिक्र करना समीचीन होगा. 31दिसंबर 1952 को कानपुर में जनसंघ के प्रथम अधिवेशन में एक प्रस्ताव पास किया गया. जिसमें पूर्वी बंगाल के हिन्दुओं की दिनों-दिन बिगड़ती स्थिति पर चिंता जाहिर की गई. उसमें कहा गया कि "भारत का यह अधिकार ही नहीं अपितु कर्तव्य भी

बनता है कि पाकिस्तान के अल्पसंख्यकों की रक्षा का भार संभाले". इसी क्रम में 18 जुलाई 1970 को चंडीगढ़ में भी जनसंघ की भारतीय प्रतिनिधि सभा में एक प्रस्ताव पारित किया. जिसमें विस्थापितों की चिंता जाहिर की गई. प्रस्ताव में कहा गया कि "जनसंघ का यह निश्चित मत है कि पाकिस्तान के विस्थापितों को सहायता और पुनर्वास तथा पाकिस्तान में शेष हिन्दुओं के जीवन,सम्मान और सम्पत्ति की रक्षा के लिए भारत सरकार को अल्पकालिक और दीर्घकालिक दोनों प्रकार के कदम उठाने चाहिए." दुर्भाग्य से तत्कालीन सरकार ने इस पर विचार नहीं किया. जिसके परिणामस्वरूप स्थिति आज इतनी विकराल हो गई है. इसके अलावा जनसंघ ने 1951 में अपने घोषणापत्र में भी स्पष्ट रूप से विस्थापितों के पुनर्वास की समस्या को सर्वोच्च प्राथमिकता दिए जाने की बात कही. जनसंघ ने माना कि जो लोग विभाजन से पीड़ित हैं और भारत के पास आते हैं उनका पुनर्वास कानूनी रूप से और नैतिक रूप से भी भारत की जिम्मेदारी है. 1971 के घोषणापत्र में भी जनसंघ ने विभाजन की त्रासदी से पीड़ितों के दुखों को समझते हुए यह माना कि पूर्वी पाकिस्तान से साल दर साल लाखों विस्थापितों का आना जारी है. जनसंघ इस बात पर विशेष ध्यान देगा कि पाकिस्तान में हिंदुओं के साथ अच्छा व्यवहार हो, जिससे उन्हें अपने प्राण और इज्जत बचाने के लिए भागना न पड़े. साथ ही जनसंघ यहां आए सभी विस्थापितों को शीघ्रता से बसाने का प्रबंध करेगा.

अपने घोषणापत्रों और पार्टी के दस्तावेजों में पाकिस्तान और बांग्लादेश के शरणार्थियों की समस्याओं को पार्टी क्रमश: प्रमुखता से उठाती रही. भारतीय जनता पार्टी ने 2019 के घोषणापत्र में भी बेहद स्पष्ट रूप से माना कि पड़ोसी देशों के धार्मिक अल्पसंख्यक समुदायों के व्यक्तियों की सुरक्षा के लिए, उन्हें उत्पीड़न से बचाने के लिए हम नागरिकता संशोधन विधेयक को लागू करने के लिए प्रतिबद्ध हैं. भारत के पड़ोसी देशों में उत्पीड़न से बचने वाले हिंदुओं, जैन, बौद्ध, सिख और ईसाई को भारत में नागरिकता दी जाएगी. इस विधेयक के माध्यम से नरेंद्र मोदी और अमित शाह ने अपने प्रेरणा पुरुषों के अधूरे संकल्प को पूरा करने का ऐतिहासिक कार्य किया है तथा देश की जनता के समक्ष यह स्पष्ट संदेश दिया है कि वह अपने वायदों, नीतियों एवं विचारधारा को सत्ता में हो अथवा विपक्ष में उसपर अडिग रहती है.

गृहमंत्री ने हर सवाल का दिया स्पष्ट जवाब

गृहमंत्री अमित शाह ने लोकसभा तथा राज्य सभा अपने दोनों भाषणों में विपक्ष द्वारा खड़े किये जा रहे तमाम सवाल एवं संशयों को तर्कसंगत जवाबों से दूर किया. गृहमंत्री के लोकसभा और राज्यसभा के भाषण को सुनने के बाद एक बात कहने में कोई हिचक नहीं होना चाहिए कि गृहमंत्री ने पूरी तैयारी के साथ जवाब दिया. जिससे कई दफा विपक्ष असहज भी दिखने लगा. बहरहाल जो मुख्य बातें उन्होंने कहीं उसमें उन्होंने बार-बार यह स्पष्ट किया कि नागरिकता संशोधन विधेयक से हिन्दुस्तानी मुस्लिमों को कोई दिक्कत नहीं होने वाली है. इसके अतिरिक उन्होंने बांग्लादेश, पाकिस्तान में अल्पसंख्यको को मिली प्रताड़ना का विस्तृत जिक्र किया कि कैसे उनके साथ धार्मिक प्रताड़ना होती थी. नागरिकता संशोधन विधेयक पर पंडित नेहरु और इंदिरा से लेकर मनमोहन सिंह तक कांग्रेस कैसे अपने रुख में परिवर्तन लाती रही है उसको भी गृहमंत्री ने इंगित किया. यह कहने में कोई दोराय नहीं है कि इस विधेयक पर संसद के दोनों सदनों में दिलचस्प चर्चा सुनने को मिली और गृहमंत्री ने अपने भाषण से उन सभी शंकाओं का पटाक्षेप कर दिया जिसे विपक्ष हवा दे रहा था.

(लेखक डॉ श्यामा प्रसाद मुखर्जी रिसर्च फाउंडेशन में रिसर्च एसोसिएट हैं. ये उनके निजी विचार हैं.)

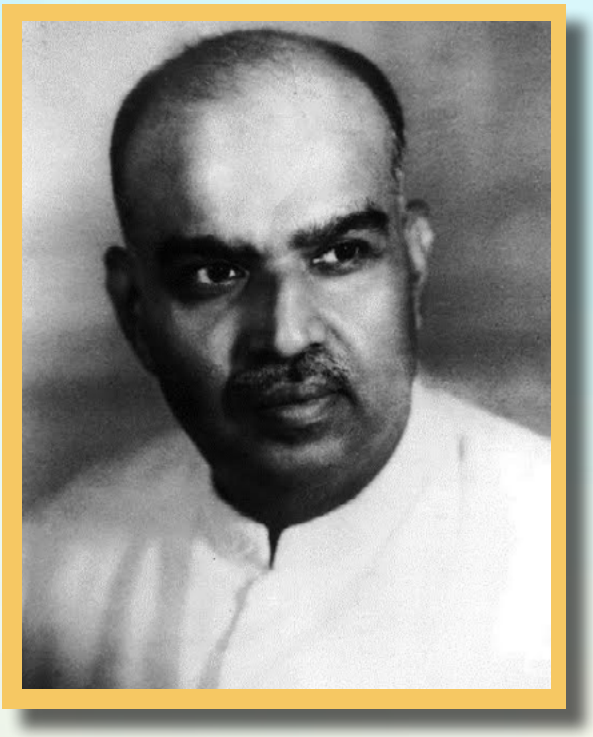

"हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि पूर्वी बंगाल के हिंदू, न केवल मानवीय आधार पर, बल्कि आगामी पीढ़ियों के भविष्य के लिए उनके द्वारा खुशी-खुशी सहे गये कष्टों और बलिदानों के आधार पर तथा अपने हितों को दरकिनार कर भारत की राजनीतिक स्वतंत्रता और बौद्धिक प्रगति की नींव रखने के लिए वह भारत के संरक्षण के हकदार हैं. यह उन मृत नेताओं और युवाओं की एकजुट आवाज़ है जो भारत माता के लिए हँसते-हँसते फांसी के फंदे पर झूल गए थे, उनकी आवाज आज के स्वतंत्र भारत में न्याय और निष्पक्षता का आह्वान करती है। "

डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी

संसद में उद्योग एवं आपूर्ति मंत्री पद से इस्तीफ़ा देने के दौरान, 19 अप्रैल, 1950

Published By:
Dr. Syama Prasad Mookerjee Research Foundation
9, Ashoka Road New Delhi - 110001
E-mail: office@spmrf.org, Phone: 011-23005850